ओं

ॐ

विवाहसंस्कार भाषाटीका

श्री० स्वामि दयानन्द सरस्वती की संस्कार विधि से उद्धृतकर सर्वसाधारण के हितार्थ

श्रीमान् पं० चन्द्रभानुशर्म्मा उपदेशक आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने संपादन किया।

तथा

पं० कृष्ण उपदेशक (अमृतसरी) ने छपाया।

विवाह के समस्त मन्त्रों का अर्थ सरल भाषा में किया गया है।

कमरशल प्रैस लुधियाना

१९७५ विक्रमी   मूल्य ।।≈)।।

ओं

मङ्गल कार्य (वामदेव्य गान*)

गर्भाधानादि संस्कार पर्यन्त पूर्वोक्त और निम्नलिखित सामवेदोक्त वामदेव्यगान अवश्य करें, वे मन्त्र ये हैं-

ओं भूर्भुवः स्वः। कया नश्चित्र आभुव दूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता ॥ १॥ ओं भूर्भुवः स्वः। कस्त्वा सत्योमदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु ॥ २ ॥ ओं भूर्भुवः स्वः। अभीषुणः सखीनामविता जरितृणाम्। शतम्भवा स्यूतये॥३॥

महावामदेव्यम्।

काऽ५या नश्चा३ ईत्रा३ आभुवात्। ऊ। ती सदा वृधः सखा। औ३ होहाई। कया२३ शचाई। ष्ठयौहो३ हुम्मा२। वा२ र्तो३ऽ५हाई। (१)। काऽ५स्त्वा सत्यो३मा३दानाम्। मा। हिष्ठोमात्सादन्ध। सा। औ३होहाई। दृढा२३चिदा। रुजौहो३। हुम्मा२। वा ऽ३सो३ऽ५हायि (२) आऽ५भी। षुणा३ः सा३खीनाम्। आ विता जरायितृणाम्। औ२३ हो हायि। शता२३म्भवा। सियौहो३। हुम्मा२। ताऽ२यो३ऽ५हायि ॥ ३ ॥

(साम० उत्तरार्चिके। अध्याये १ खं० ४ मं० ३ ३। ४। ५ ॥)

* अपवृत्ते कर्मणि वामदेव्यगानम्, शान्त्यर्थं शान्त्यर्थम्, गोभि० गृ० सू० प्र० १ का० ६ सू० २१

ॐ

विवाह संस्कार पद्धति

विधिः—जब कन्या रजस्वला होकर शुद्ध होजाय तब जिस दिन गर्भाधान की रात्रि निश्चित की हो उस रात्रि से तीन दिन पूर्व विवाह करने के लिये प्रथम ही सब सामग्री जोड़ रखनी चाहिये और यज्ञ-शाला वेदी, ऋत्विक्, यज्ञ-पात्र, शाकल्य सब सामग्री शुद्ध करके रखनी उचित है।

पश्चात् एक घण्टे मात्र रात्रि * जाने पर।

मन्त्रों को बोल कर तथा उन का आशय समझ, वर वधू स्वगृह पर स्नान करें।

ओं काम वेद ते नाममदो नामासि समानयामुँसुरा ते अभवत्। परमत्र जन्माग्ने तपसो निर्मितोऽसि स्वाहा॥ १॥

अर्थ—हे काम! तेरे नाम को सब जगत् जानता है मदकारी तू प्रसिद्ध है। तेरे लिए यह कन्या मद साधन हो चुकी है अथवा यह जल, तेरे शान्त्यर्थ उपस्थित है इस कन्या को वा इस मद को वा इस पति को मान सहित कर। हे कामाग्ने! इस स्त्री जाति में ही तेरा

---

* यदि आधी रात तक विधि पूरी न होसके तौ मध्याह्नोत्तर आरम्भ कर देवे कि जिससे मध्य रात्रि तक विवाह विधि पूरी हो जावे।

उत्कृष्ट जन्म है गृहस्थाश्रम पालनरूप उत्कृष्ट धर्म के लिए, तू ईश्वर ने बनाया है ॥ १ ॥

ओं इमं त उपस्थं मधुना सꣳसृजामि प्रजापतेर्मुखमेतद् द्वितीयम् । तेन पुꣳसोभिभवासि सर्वानवशान्वशिन्यसि राज्ञी स्वाहा ॥ २ ॥

अर्थ—हे वधू ! इस तेरे आनन्द जनक इन्द्रिय को प्रेम से संसृष्ट करता हूं यह गृहस्थी बनने का द्वितीय द्वार है । उस से ही नहीं किसी के वश में होने वाले भी सब पुरुषों को वशीभूत कर लेती है और वश करने वाली तू घर की स्वामिनी है ॥ २ ॥

ओं अग्निं क्रव्यादमकृण्वन् गुहानाः स्त्रीणामुपस्थमृषयः पुराणाः । तेनाज्यमकृण्वꣳस्त्रैशृङ्गं त्वाष्ट्रं त्वयि तद्दधातु स्वाहा ॥ ३ ॥

अर्थ-तत्त्व-दर्शी पुराने ऋषि लोगों ने स्त्री जाति के आनन्द जनक इन्द्रिय को मांस खाने वाला आग जैसा स्वीकार किया है । उसके साथ पुरुष शिश्न से उत्पन्न उत्पादक शक्ति वाले वीर्य को घृत=घी जैसा स्वीकार किया है । हे वधू ! तेरे में वह शुक्र पुष्ट हो ।

वस्त्रालङ्कार धारण करना, होम करना बरात लेजाना ।

इन मन्त्रों से सुगन्धित शुद्ध जल से पूर्ण कलशों को ले के वधू उत्तम वस्त्रालङ्कार धारण करके उत्तम आसन पर पूर्वाभिमुख बैठे तत्पश्चात् ईश्वरस्तुति, प्रार्थनोपासना, स्वतिवाचन, शान्तिकरण, वधू वर करे तत्पश्चात् अभ्याधान, समिदाधान, स्थालीपाक आदि यथोक्त कर वेदी के समीप रक्खे । फिर वर, वधू के घर ले आवें जिस

समय वर, बधू के घर प्रवेश करे उसी समय वधू और कार्यकर्त्ता मधुपर्क आदि से वर का निम्न लिखित प्रकार आदर सत्कार करें उस की रीति यह है कि वर वधू के घर में प्रवेश करके पूर्वाभिमुख खड़ा रहे और वधू तथा कार्यकर्त्ता वर के समीप उत्तराभिमुख खड़े रह के वधू और कार्यकर्त्ता--

कन्या तथा माता पिता वाणी द्वारा वर का सत्कार।

साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम्।

अर्थ-आप अच्छे प्रकार बैठिए आप का हम सब पूजन=सत्कार करेंगे।

इस वाक्य को बोले-

ओं अर्चय।

अर्थ-सत्कार कीजिए।

ऐसे प्रत्युत्तर देवे। पुनः जो वधू और कार्यकर्त्ता ने वरके लिए उत्तम आसन सिद्ध कर रक्खा हो उस को वधू हाथ में ले वरके आगे खड़ी रहे।

आसन से सत्कार।

ओं विष्टरो विष्टरो विष्टरः * प्रतिगृह्यताम्।

अर्थ-यह आसन है, आप ग्रहण कीजिए।

ओं प्रतिगृह्णामि।

अर्थ-स्वीकार करता हूं।

इस वाक्य को बोल के वधू के हाथ से आसन ले बिछा उस पर सभा-मण्डप में पूर्वाभिमुख बैठ के-

---

* आदरार्थ ३ बार कथन है, ऐसा सर्वत्र समझना चाहिये।

ओं वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः ।
इमन्तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति ॥

अर्थ—प्रकाश करने वाले ग्रह नक्षत्रादिकों के बीच में सूर्य जैसे श्रेष्ठ है, वैसे ही कुल, ज्ञान, आचार, शरीर, अवस्था तथा अन्य गुणों से सजातीय तुल्य पुरुषों में मैं श्रेष्ठ हूं । और जो कोई मुझे उपक्षीण करना चाहता है अर्थात् मुझे नीचा दिखाना चाहता है उस पुरुष को लक्ष्य बना कर इस आसन के ऊपर बैठता हूं अर्थात् उसे इस आसन के तुल्य नीचा करके बैठता हूं ।

इस मन्त्र को बोले तत्पश्चात् कार्यकर्त्ता एक सुन्दर पात्र में पूर्ण जल भर के कन्या के हाथ में देवे और कन्या—

पैर धोने के लिए जल से सत्कार ।

ओं पाद्यं पाद्यं पाद्यं प्रतिगृह्यताम् ।

अर्थ—पैर धोने के लिए जल स्वीकार कीजिए ।

इस वाक्य को बोल के वरके आगे धरे पुनः वर—

ओं प्रतिगृह्णामि ।

अर्थ—स्वीकार करता हूं ।

इस वाक्य को बोल के कन्या के हाथ से उदक ले पग * प्रक्षालन करे और उस समय वर— इस मन्त्र को बोले

ओं विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोह ॥

---

* यदि ब्राह्मण वर्ण हों तो प्रथम दक्षिण पग पश्चात् बायां और अन्य क्षत्रियादि वर्ण हों तो प्रथम बायां पग धोवे पश्चात् दहना

अर्थ-हे जल! तू विविध प्रकार से शोभित होने वाले अन्न का (विराट का) सार भूत रस है। उस अन्न के सार भूत तुझ को मैं व्याप्त होऊं अर्थात् तुझ से रोगादि निवृत्ति के लिए ईश्वर करे कि सम्बन्ध करूं अन्न का सार तू इस समय मेरे विषय में पैरों की रक्षा के लिए उपस्थित है।

इस मन्त्र को बोले-तत्पश्चात् फिर भी कार्य कर्त्ता दूसरा शुद्ध लोटा पवित्र जल से भर कन्या के हाथ में देवे पुनः कन्या-

अर्घ जल से मुख धोने का सत्कार।

ओं अर्घोऽर्घोऽर्घः प्रतिगृह्यताम् ॥

अर्थ-सत्कारार्थ मुख प्रक्षालनार्थ जल स्वीकार करें।

इस वाक्य को बोल के वर के हाथ में देवे और वर-

ओं प्रतिगृह्णामि ॥

अर्थ-मैं स्वीकार करता हूं।

इस वाक्य को बोल के कन्या के हाथ से जल पात्र ले के उस से मुखप्रक्षालन करे और उसी समय वर मुख धोके-

ओं आपस्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि। ओं समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत। अरिष्टाअस्माकं वीरा मा परासेचि मत्पयः ॥

अर्थ-हे जलो! तुम आप्ति-नैरोग्य लाभादि के हेतु हो। तुम से सब आरोग्यतारूप मनोरथों को प्राप्त होऊं। अर्थात् जल से सब शरीर के विकारों को दूर करूं जिससे स्वस्थता की उपलब्धि हो। हे जलो तुझ को मैं अन्तरिक्षलोक में भेजता हूं-पहुंचाता हूं अर्थात् छोड़ता हूं, इससे तुम अपने कारणभूत जल के संमुख जाओ। हमारे वीर लोग रोग रहित-दुःख रहित हों मुझ से मङ्गल जल ईश्वर करे

कि न छूटे अर्थात् मैं सर्वदा पूजनीय बना रहूं। मैं जल से काम लेकर उसे छोड़ता हूं जिससे वह अपने कारण स्वरूप को प्राप्त होकर फिर अन्य वीरादि का उपकारक हो।

इन मन्त्रों को बोले। तत्पश्चात् वेदी के पश्चिम बिछाये हुए उसी शुभासन पर पूर्वाभिमुख बैठे फिर कार्यकर्त्ता एक सुन्दर उपपात्र जल से पूर्ण भर उस में आचमनी रख कन्या के हाथ में देवे और उस समय कन्या— बोले

आचमन के लिए जल द्वारा सत्कार।

ओं आचमनीयमाचमनीयमाचमनीयम्प्रतिगृह्यताम्

अर्थ-पीने योग्य जल सहित पात्र ग्रहण कीजिये।

इस वाक्य को बोल के वर के सामने करे और वर-

ओं प्रतिगृह्णामि।

अर्थ-स्वीकार करता हूं।

इस वाक्य को बोल के कन्या के हाथ में से जल पात्र को ले सामने धर उस में से दहिने हाथ में जल, जितना अंगुलियों के मूल तक पहुंचे उतना ले के वर— बोले

ओं आऽऽमाऽगन् यशसास ँसृज वर्चसा।
तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्

अर्थ-हे जलेश्वर! परमात्मन्! आप मुझे यश के साथ अच्छे प्रकार प्राप्त हो ओ। और आप का आश्रयण करने वाले मुझ को अपने तेज से युक्त करो। और प्रजाओं-पुत्र पौत्रादि का प्रेम पात्र करो। गवादि पशुओं का स्वामी बनाओ। और जल आदि से शरीरा-वयवों का अहिंसक-पीड़ा न देने वाला करो।

इस मन्त्र से एक आचमन इसी प्रकार दूसरी और तीसरी बार

इसी मन्त्र को पढ़ के दूसरा और तीसरा आचमन करे । तत्पश्चात् कार्यकर्त्ता मधुपर्क * का पात्र कन्या के हाथ में देवे और कन्या—

मधुपर्क से सत्कार ।

ओं मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः प्रतिगृह्यताम् ।

अर्थ—यह मधुपर्क है ग्रहण कीजिए ।

ऐसी विनति वर से करे और वर—

ओं प्रतिगृह्णामि ।

अर्थ—स्वीकार करता हूं ।

इस वाक्य को बोल के कन्या के हाथ से ले और उस समय—

ओं मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे ।

अर्थ—तुझे मित्र की दृष्टि से देखता हूं ॥

इस मन्त्रस्थ वाक्य को बोल के मधुपर्क को अपनी दृष्टि से देखे और—

ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसतेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि ।

अर्थ—परमात्मा के ऐश्वर्य के लिए तुझे ग्रहण करता हूं । सूर्य और चन्द्रमा के जैसे परोपकारार्थ बल और पुरुषार्थ के लिए तथा प्राणादि वायु के ग्रहण और त्याग के लिए तेरे हाथ को ग्रहण करता हूं ।

---

* मधुपर्क उस को कहते हैं जो दही में घी वा शहद मिलाया जाता है उस का परिमाण १२ बारह तोले दही में ४ चार तोले शहद अथवा ४ चार तोले घी मिलाना चाहिए और मधुपर्क कांसे के पात्र में होना उचित है ।

इस मन्त्र को बोल के मधुपर्क पात्र को वाम हाथ में ले वे और

ओं भूर्भुवः स्वः मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नस्सन्त्वोषधीः ॥ १ ॥

अर्थ–हे परमात्मन्! यज्ञ की इच्छा करने वाले पुरुष के लिए वायु सरस नीरोग होकर बहैं। नदियां सरस जल को देवें। हमारे लिए रोग नष्ट करने वाली औषधियां माधुर्य युक्त हों।

ओं भूर्भुवः स्वः। नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥ २ ॥

अर्थ–रात्रि निर्विघ्न व्यतीत हों और प्रभातकाल की वेलाएं भी निरुपद्रव हों। यह पार्थिवलोक जो कि माता के तुल्य रक्षक है विषैले जन्तुओं से रहित हो। हमारा पिता के तुल्य रक्षक अन्तरिक्ष गवादि मण्डल सुख कारक हो।

ओं भूर्भुवः स्वः। मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमां अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥३॥

अर्थ–हमारे लिए यज्ञोपयुक्त ओषधियां वा सोम माधुर्यगुण युक्त हों सूर्य मण्डल सुखकारी हो। सूर्य की किरणें वा यज्ञोपयोगी गौ आदि पशु रसवाली हों।

इन तीन मन्त्रों से मधुपर्क की ओर अवलोकन करे—

ओं नमः श्यावास्यायान्नशने यत्त आविद्धं तत्ते निस्कृन्तामि ॥

अर्थ–हे अग्ने! जठराग्ने! पीले वर्ण वाले तेरे लिए मैं आदर

करता हूं । और तुझ अन्न के तुल्य अशय-भोज्य इस मधुपर्क में जो वस्तु न खाने योग्य मिला हुआ है उसे हटाता हूं ।

इस मन्त्र को पढ़, दहिने हाथ की अनामिका और अंगुष्ठ से मधुपर्क को तीन वार बिलोवे ※ और उस मधुपर्क में से वर—

ओं वसवस्त्वा गायत्रेण छन्दसा भक्षयन्तु ॥

अर्थ—गायत्र छन्द के साथ तुझे वसुसंज्ञक २५ वर्ष की अवस्था वाले ब्रह्मचारी खावें ।

इस मन्त्र से पूर्व दिशा ।

ओं रुद्रास्त्वा त्रैष्टुभेन छन्दसा भक्षयन्तु ।

अर्थ—त्रैष्टुभछन्द के साथ तुझे रुद्र संज्ञक ३६ वर्ष के ब्रह्मचारी खावें ।

इस मन्त्र से दक्षिण दिशा ।

ओं आदित्यास्त्वा जागतेन छन्दसा भक्षयन्तु ।

अर्थ—जगतीछन्द के साथ तुझे आदित्यसंज्ञक ४८ वर्ष के ब्रह्मचारी खावें ।

इस मन्त्र से पश्चिम दिशा ।

ओं विश्वे त्वा देवा आनुष्टुभेन छन्दसा भक्षयन्तु ।

अर्थ—अनुष्टुप्छन्द को बोलते हुए तुझे सब विद्वान् खावें ।

इस मन्त्र से उत्तर दिशा में थोड़ा छोड़े अर्थात् छींटे देवे ।

※ इस मन्त्र से मधुपर्क को विलोडन करते हुए यदि कोई छोटा तृण आदि पड़ा हो तो निकाल देना चाहिए । यहां पाराशर का ऐसा मत है कि "अनामिकांगुष्ठेन च त्रिर्विक्षयति" अनामिका और अंगूठे से तीन वार मधुपर्क का थोड़ा सा हिस्सा पात्र से बाहर फेंक देना चाहिए ।

ओं भूतेभ्यस्त्वा परिगृह्णामि ॥

अर्थ–अन्य प्राणियों के लिये भी तुझे ग्रहण करता हूं ॥

इस मन्त्रस्थ वाक्य को बोल के पात्र के मध्य भाग में से ले के ऊपर की ओर तीन वार फेंकना तत्पश्चात् उस मधुपर्क के ३ भाग करके ३ कांसे के पात्रों में धर भूमि में अपने सन्मुख तीनों पात्र रक्खे, रख के—

ओं यन्मधुनो मधव्यं परमꣳ रूपमन्नाद्यम् । तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि ।

अर्थ–हे विद्वानो ! जो पुष्पों के रस का मिष्टता के लिये उपयुक्त यह पवित्र स्वरूप है और यह अन्न की तरह खाने योग्य है । मैं उसी मधु के माधुर्योपयोगी अन्न के तुल्य खाने योग्य सुन्दर स्वरूप से पवित्र, मधुरभाषी, अन्न मात्र का भोक्ता, आप की कृपा से होऊं ।

इस मन्त्र को एक२ बार बोल के एक२ भाग में से वर थोड़ा२ प्राशन करे वा सब प्राशन करे जो उन पात्रों में शेष उच्छिष्ट मधुपर्क रहा हो वह किसी अपने सेवक को देवे वा जल में डाल देवे ।

तत्पश्चात्

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥

अर्थ–हे अमृत ! तू प्राणियों का आश्रयभूत है यह हमारा कथन शोभन हो ।

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्री श्रयतां स्वाहा ॥

अर्थ–मुझ में सत्यता, कीर्ति, शोभा, लक्ष्मी, स्थित हो ।

इन दो मन्त्रों से २ आचमन अर्थात् एक से एक और दूसरे से

दूसरा घर करे तत्पश्चात् वर यथाविधि चक्षुरादि इन्द्रियों का जल से स्पर्श करे, फिर कन्या—

दहेज में गौ आदि देना।

ओं गौर्गौर्गौः प्रतीगृह्यताम्।

अर्थ-यह गाय लीजिए।

इस वाक्य से वर की विनति करके अपनी शक्ति के योग्य वर को गौ दे गौ के अभाव में द्रव्य जो कि वर के योग्य हो अर्पण करे और वर

ओं प्रतिगृह्णामि।

अर्थ-मैं स्वीकार करता हूं।

इस वाक्य से उस को ग्रहण करे इस प्रकार मधुपर्क विधि यथावत् करके वधू और कार्यकर्त्ता वर को सभा मण्डप स्थान से घर में लेजा के शुभ आसन पर पूर्वाभिमुख बैठा के वर के सामने पश्चिमाभिमुख वधू को बैठावे और कार्यकर्त्ता उत्तराभिमुख बैठ के—

गोत्रोच्चारण।

ओं अमुकगोत्रोत्पन्नामिमाममुकनाम्नीमलंकृतां कन्यां प्रतिगृह्णातु भवान्॥

अर्थ-अमुक गोत्रोत्पन्न अमुक नाम वाली, तेजस्वी भूषणादि से अलंकृत इस कन्या को आप स्वीकार करें॥

इस प्रकार बोल के वर का हाथ चत्ता अर्थात् हथेली ऊपर रख के उस के हाथ में वधू का दक्षिण हाथ चत्ता ही रखना और वर

ओं प्रतिगृह्णामि।

अर्थ-स्वीकार करता हूं।

ऐसा बोल के—फिर

ओं जरां गच्छ परिधत्स्व वासो भवा कृष्टी-नामभिशस्तिपावा शतं च जीव शरदः सुवर्चा रयिं च पुत्राननु संव्ययस्वायुष्मतीदं परिधत्स्व वासः

अर्थ-हे कन्ये ! तू निर्दोष वृद्धावस्था को, मेरे साथ प्राप्त हो । और मेरे दिए हुए इस वस्त्र को पहन । कामादिकों से खैंचे हुए मनुष्यों के बीच में निश्चयरूप से अभिशाप-प्रमाद से अपने आप की करने वाली हो । और सौ वर्ष पर्यन्त प्राण धारण कर और तेजस्विनी होकर धनका और पीछे पुत्रों का संग्रह कर । हे सुन्दर आयु वाली कन्ये ! इस वस्त्र को पहन ।

वर का वधू को देशी वस्त्र देकर सत्कार करना ।

इस मन्त्र को बोल के वधू को उत्तम वस्त्र देवे । तत्पश्चात्

ओं या अकृतन्नवयन् या अतन्वत याश्च देवीस्तन्तू नभितो ततन्थ । तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वायुष्मतीदं परिधत्स्व वासः ॥

अर्थ-जिन व्यवसायिनी स्त्रियों ने, इस वस्त्र के सूत को काता है और जिन देवियों ने इस वस्त्र के सूत को बुना है और जिन्होंने इस के सूत को फैलाया है और जिन देवियों ने इस वस्त्र के सूतों को दोनों ओर से सूची कर्म से वा तुरी आदि के व्यापार से गूंथ कर फैलाया है वे देवियां तेरे प्रति वृद्धावस्था पर्यन्त ऐसे ही वस्त्र पहनाती रहें, हे प्रशस्त आयु वाली कन्ये ! इस वस्त्र को तू पहन ।

इस मन्त्र को बोल के वधू को वर उप वस्त्र देवे । वह उपवस्त्र को यज्ञोपवीतवत् धारण करे ।

ओं परिधास्ये यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये ॥

अर्थ—हे सज्जनो ! अपने शरीर को आच्छादित करने के लिये प्रतिष्ठा के लिये और दीर्घ जीवन के लिये शरीररूप धन की पुष्टि करने वाले सुन्दर वस्त्रों को मैं अच्छे प्रकार धारण करूंगा। क्योंकि बहुत धन पुत्रादि से संयुक्त होकर मैं वृद्धावस्था पर्यन्त जीवन की इच्छा रखता हूं। ईश्वर कृपा करे कि मैं सौ वर्ष वृद्धावस्था पर्यन्त जीवन लाभ करूं।

वर का वस्त्र धारण करना।

इस मन्त्र को पढ़ के वर आप अधोवस्त्र धारण करे और:—

ओं यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्रा बृहस्पती। यशो भगश्च मा विदद्यशो मा प्रतिपद्यताम् ॥

अर्थ—हे सज्जनो ! अन्तरिक्ष और पृथिवी लोक मुझे यश के साथ ही मिलें। धनी और विद्वान् मुझे यश के साथ ही प्राप्त हों। मुझे ईश्वर यश का लाभ करावे और आप लोग आशीर्वाद दें कि मुझे यश प्रतिष्ठा प्राप्त हो यह वस्त्र पहिनाने की विधि पारस्कर गृह्य सूत्र में है।

कार्यकर्त्ता बड़े होम की तय्यारी करे।

इस उपरोक्त मन्त्र को पढ़के वर दुपट्टा धारण करे, इस प्रकार वधू वस्त्र परिधान करके जबतक सम्हले तबतक कार्यकर्त्ता अथवा दूसरा कोई यज्ञमण्डप में जा सब सामग्री यज्ञकुण्ड के समीप जोड़कर रक्खे

और वर पक्ष का एक पुरुष शुद्ध वस्त्र धारण कर शुद्ध जल से पूर्ण एक कलश को ले के यज्ञकुण्ड की परिक्रमा कर कुण्ड के दक्षिण भाग में उत्तराभिमुख हो कलश स्थापन कर जबतक विवाह का कृत्य पूर्ण न हो जाय तब तक बैठा रहे। और उसी प्रकार वर के पक्ष का दूसरा पुरुष हाथ में दण्ड ले के कुण्ड के दक्षिण भाग में कार्य समाप्ति पर्यन्त उत्तराभिमुख बैठा रहे और वधू का सहोदर भाई अथवा सहोदर न हो तो चचेरा भाई मामा का पुत्र अथवा मौसी का लड़का हो वह चावल वा जुवार की धाणी (फुलियां) और शमी वृक्ष के पत्ते इन दोनों को मिलाकर शमी पत्रयुक्त धाणी की ४ चार अंजली एक शुद्ध सूप में रख के धाणी सहित सूप ले के यज्ञकुण्ड के पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख बैठा रहे। फिर कार्य्यकर्त्ता एक सपाट शिला जो कि सुन्दर चिकनी हो उस को तथा वधू और वर को कुण्ड के समीप बैठाने के लिए दो कुशासन वा यज्ञिय तृणासन अथवा यज्ञिय वृक्ष की छाल के जो कि प्रथम से सिद्ध कर रक्खे हों उन आसनों को रखवावे। तत्पश्चात् वस्त्र धारण की हुई कन्या को कार्य्यकर्त्ता वर के सन्मुख लावे और उस समय वर और कन्या यह मन्त्र उच्चारण करें।

पति मन्त्र बोलें।

ओं समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ। सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ ॥१॥

अर्थ–वर, हे इस यज्ञशाला में बैठे हुए विद्वान् लोगो आप निश्चय करके जानें कि हम अपनी प्रसन्नता पूर्वक गृहाश्रम में एकत्र रहने के लिए एक दूसरे को स्वीकार करते हैं। कि हमारे हृदय जल के समान शान्त और मिले हुए रहेंगे जैसे प्राणवायु हम को प्रिय है वैसे हम दोनों एक दूसरे से सदा प्रसन्न रहेंगे जैसे धारण करने हारा परमात्मा सब में मिला हुआ है सब जगत् धारण करता है

वैसे हम दोनों एक दूसरे का धारण करेंगे जैसे उपदेश करने द्वारा श्रोताओं से प्रीति करता है वैसे हम दोनों का आत्मा इस दृढ़ प्रेम को धारण करे।

कन्या अर्थ बोले ।

अर्थ-कन्या, हे इस यज्ञशाला में बैठे हुए विद्वान् लोगों आप निश्चय करके जाने कि मैं अपनी प्रसन्नता पूर्वक गृहाश्रम में एकत्र रहने के लिये स्वीकार करती हूं कि मेरा हृदय जल के समान शान्त और मिली हुई रहूंगी जैसे प्राणवायु मुझ को प्रिय है वैसे मैं आप से सदा प्रसन्न रहूंगी जैसे धारण करने द्वारा परमात्मा सब में मिला हुआ सब जगत् को धारण करता है। वैसे मैं एक दूसरे का धारण करूंगी जैसे उपदेश करने द्वारा श्रोताओं से प्रीति करता है । वैसे मेरा आत्मा आप के साथ दृढ़ प्रेम को धारण करे ॥ ॥

इस मन्त्र को वर बोले तथा दक्षिण हाथ से वधू का दक्षिण हाथ पकड़े हुए ।

वर का मन्त्रोच्चारण ।

ओं यदैषि मनसा दूरं दिशोऽनुपवमानो वा ।
हिरण्यपर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतुअसौ२

अर्थ-कन्याका नाम उच्चारण करके, हे वरानने ! जैसे तू अपनी इच्छा से मुझ को जैसे पवित्र वायु वा जैसे तेजोमय जल आदि को किरणों से ग्रहण करने वाला सूर्य दूरस्थ पदार्थों और दिशाओं को प्राप्त होता है वैसे तू प्रेम पूर्वक अपनी इच्छा से मुझ को प्राप्त होती है वा होता है उस तुझ को वह परमेश्वर मेरे मन के अनुकूल करे और जो आप मन से मुझ को प्राप्त होती हो उस आप को जगदीश्वर मेरे मन के अनुकूल सदा रक्खे ॥ २ ॥

इस मन्त्र को वर बोल कर उस को ले कर घर के बाहिर मण्डपस्थान में कुण्ड के समीप हाथ पकड़े हुए दोनों आवें और वर-यह मन्त्र बोले—

पुनः दो मन्त्रों का उच्चारण।

ओं भूर्भुवः स्वः। अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः। वीरसूर्देवृकामा स्योना शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ३ ॥

अर्थ-हे वरानने पति से विरोध न करने हारी! जिस के रक्षा करने वाला प्राणदाता सब दुःखों को दूर करने हारा सुखस्वरूप और सब सुखों के दाता उस परमात्मा की कृपा और अपने उत्तम पुरुषार्थ से तू प्रिय दृष्टि हो मंगल करने हारी सब पशुओं को सुख दाता पवित्रान्तःकरणयुक्त प्रसन्नचित्त सुन्दर शुभ गुण कर्म स्वभाव और विद्या से सुप्रकाशित उत्तम वीर पुरुषों को उत्पन्न करने हारी देवर की शुभ कामना करती हुई सुखयुक्त हो हमारे मनुष्यादि के लिये सुख करने हारी सदा हो और गाय आदि पशुओं को भी सुख देने हारी हो वैसे ही मैं तेरा पति भी वर्त्ता करूंगा ॥ ३ "

यज्ञ की महिमार्थ एक परिक्रमा।

ओं भूर्भुवः स्वः। सा नः पूषा शिवतमामैरयसा न उरू उशती विहर। यस्यामुशन्तः प्रहराम शेफं यस्यामुकामा बहवो निविष्टयै ॥ ४ ॥

अर्थ-जगत् का पोषक परमेश्वर हमारे प्रति कल्याणकारिणी कन्या को प्रीति युक्त बनावे, जिस से कि वह कन्या हमारे लिए सुख

की इच्छा करती हुई, स्वयं आनन्द को प्राप्त हो । और हम उस से आनन्द को प्राप्त होते हुए धार्मिक सन्तान उत्पन्न करें।

इन चार मन्त्रों को बोलने के पीछे दोनों वर वधू, यज्ञकुण्ड की प्रदक्षिणा करके कुण्ड के पश्चिम भाग में प्रथम स्थापन किए हुए आसन पर पूर्वाभिमुख वर के दक्षिण भाग में वधू और वधू के वाम भाग में वर बैठ के। वधूः—

वधू की मङ्गल प्रार्थना।

ओं प्र मे दतियानः पन्थाः कल्पतां शिवा अरिष्टा पतिलोकं गयेयम्।

अर्थ-मेरे पति का जो मार्ग है वैसा ही मेरा भी मार्ग बने, जिससे कि मैं सुख पाती हुई निर्विघ्न होकर सब के पति परमात्मा को प्राप्त होऊं।

पुरोहित नियुक्ति।

इस मन्त्र को बोले फिर यथाविधि यज्ञकुण्ड के समीप दक्षिण भाग में उत्तराभिमुख पुरोहित की स्थापना करे, फिर—

यज्ञ से पूर्व आचमन।

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥

अर्थ-हे सुखप्रद जल ! तू प्राणियों का आश्रयभूत है यह हमारा कथन शोभन हो।

इत्यादि ३ मन्त्रों में प्रत्येक मन्त्र से एक २ आचमन वर, वधू पुरोहित और कार्यकर्त्ता करके हाथ और मुख प्रक्षालन एक शुद्ध पात्र में करके दूर रखवा दे हाथ और मुख पोंछ के यज्ञकुण्ड में

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव व्वरि-

म्णा । तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥

इस मन्त्र से अग्न्याधान और इस मन्त्र से अग्नि प्रदीप्त करे।

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्व मिष्टापूर्त्ते सꣳ सृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥

इन मन्त्रों से समिदाधान और—

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे--इदन्न मम ॥ १ ॥

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा ॥ इदमग्नये इदन्न मम ॥ १ ॥

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेद से, स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥ २ ॥

तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि । बृहच्छोचायविष्ठ्य, स्वाहा ॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे-इदन्न मम ॥ ३ ॥

इन मन्त्रों से जल सिंचन।

ओं अदितेऽनुमन्यस्व ॥

ओं अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥

१६ आज्याहुति ।

इन ४ मन्त्रों से कुण्ड के चारों ओर दक्षिण हाथ की अंजलि से शुद्ध जल सेचन करके कुण्ड में डाली हुई समिधाओं के प्रदीप्त हुए पश्चात् वधू, वर पुरोहित और कार्यकर्त्ता आघारावाज्यभागाहुति ४ चार घी की देवें। वह यह हैं

ओं अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदन्न मम।

ओं सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय—इदन्न मम।

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये—इदन्न मम

ओं इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय—इदन्न मम।

फिर व्याहृति आहुति ४ चार घी की देवें।

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदन्न मम।

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदन्न मम।

ओं स्वरादित्यायस्वाहा॥ इदम्आदित्याय-इदन्न मम

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥
इदमग्निवायवादित्येभ्यः--इदन्न मम ।

सामान्य प्रकरणोक्त अष्टाज्याहुति ।

ओं त्वन्नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वन्हितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा । इदमग्नीवरुणाभ्याम् इदन्न मम ॥ १ ॥

ओं स त्वन्नोऽअग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ । अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम् इदन्न मम ।

ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके स्वाहा ॥ इदं वरुणाय–इदन्न मम ॥ ३ ॥

ओं तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय इदन्न मम ॥ ४ ॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुंचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्नमम

ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे– इदन्न मम ॥ ६ ॥

ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा ॥ इदं वरुणाया-ऽऽदित्यायाऽदितये च इदन्न मम ॥ ७ ॥

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञंहिंसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा ॥ इदं जातवेदोभ्यां–इदन्न मम ॥ ८ ॥

प्रधान होम की ५ पांच आहुति ।

८ सब मिल के १६ सोलह आज्याहुति दे के प्रधान होम का प्रारम्भ करें । प्रधान होम के समय वधू अपने दक्षिण हाथ को वर के दक्षिण स्कन्धे पर स्पर्श करके सामान्य प्रकरणोक्त

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्ज्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमनाय इदन्न मम ।*

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमनाय इदन्न मम ॥ २ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्वः स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय--इदन्न मम ॥ ३ ॥

---

* इन मन्त्रों का अर्थ सामान्य प्रकारण से किया जा चुका है ।

ओं भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥ ४ ॥

इन चार मन्त्रों से अर्थात् एक २ से एक २ मिल के ४ चार आज्याहुति क्रम से करे । और

प्रधान होम की पांच आहुति ।

ओं भूर्भुवः स्वः । त्वमर्यमा भवसि यत्कनीनां नाम स्वधावन् गुह्यं बिभर्षि । अंजन्ति मित्रं सुधितं न गोभिर्यद्दम्पती समनसा कृणोषि स्वाहा ॥ इदमग्नये, इदन्न मम ॥

अर्थः--हे अन्न के सम्पादक ! परमात्मन् ! जो तू कन्या आदिकों का भी नियम में रखने वाला है और तू सब जगत् को गुप्त रूप से रक्षा करने वाला है यह बात विद्वानों को प्रसिद्ध है । जिन पति और पत्नी को, तू एक चित्त शुभकर्म्म द्वारा करता है, वे दम्पती मित्र की नाई अच्छे प्रकार पोषक आप को गौ के विकारभूत घृतादिकों से, हवन द्वारा आप की आज्ञा पालन करते हुए आप को पूजित करते हैं ।

इस मंत्र को बोल के ५वीं आज्याहुति देनी तत्पश्चात्—

ओं ऋताषाड् ऋत धामाग्निर्गन्धर्वः । स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदमृतासाहे ऋतधाम्ने अग्नये गन्धर्वाय इदन्न मम ॥१॥

ओं ऋताषाडृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्स-
रसो मुदो नाम । ताभ्यः स्वाहा ॥ इदमोषधि-
भ्योऽप्सरोभ्यो मुद्भ्य इदन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ—सत्य ब्रह्म की आज्ञा को सहन करने वाला ब्रह्म से ही प्राप्त है तेज जिस को वाणी को धारण करने वाला जो अग्नि तत्व है उसी अग्नि के सम्बन्धी अर्थात् अग्नि तत्व प्रधान औषधियां जो कि आवरिक्ष वा जल में व्याप्त हैं वे सुख स्वरूप सुख देने वाली हैं, यह बात विद्वानों को प्रसिद्ध है । यह अग्नि हमारे लिए ब्राह्मण और क्षत्रियों की रक्षा करे उस अग्नि के लिए सुहुत हो और उन ओष-धियों के लिए भी सुहुत हो ।

ओं सꣳहितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वः ।
स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदं
सꣳहिताय विश्वसाम्ने सूर्याय गन्धर्वाय, इदन्न
मम ॥ ३ ॥

ओं सꣳहितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य
मरीचयोऽप्सरस आयुवो नाम ताभ्यः स्वाहा ।
इदं मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यः इदन्न मम ॥४

अर्थ—दिन और रात्रि की सन्धि करने वाला संसार में शान्ति पहुंचाने वाला पृथिवी को धारण करने वाला सूर्य है अन्तरिक्ष में व्याप्त उस सूर्य की किरणें प्रसिद्ध है कि मिली हुई हैं वह सूर्य हमारे लिए ब्राह्मण और क्षत्रियों की रक्षा करे० शेष पूर्ववत् ॥ ४ ॥

ओं सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः । स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदं सुषुम्णाय, सूर्यरश्मये चन्द्रमसे, गन्धर्वाय इदन्न मम ॥ ५ ॥

ओं सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम । ताभ्यः स्वाहा इदं नक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यः, इदन्न मम ॥

अर्थ—अच्छे प्रकार सुख देने वाला सूर्य की किरणें जिस में पड़ती हैं ऐसा वाणी को धारण करने वाला जो चान्द है उस के सम्बन्ध से ही नक्षत्र प्रकाश को करने वाले होकर अन्तरिक्ष में व्याप्त हैं, यह बात विद्वानों को प्रसिद्ध है, शेष पूर्ववत् ॥

ओं इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वः । स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदमिषिराय विश्वव्यचसे वाताय गन्धर्वाय, इदन्न मम

इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वस्तस्यापोऽप्सरस ऊर्जो नाम । ताभ्यः स्वाहा । इद मद्भयो अप्सरोभ्यःऽऊर्ग्भ्यः, इदन्न मम ॥ ८ ॥

अर्थ—गमनशील सब जगह व्याप्त वाणी को बल देकर धारण करने वाला वायु है उस के सम्बन्ध से ही बल, वा प्राणादि वायु अन्तरिक्ष में व्याप्त हैं तथा अन्यत्र भी व्याप्त हैं० शेष पूर्ववत् ॥

ओं भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वः । स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदं भुज्यवे सुपर्णाय यज्ञाय गंधर्वाय, इदन्न मम ॥ ९ ॥

ओं भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणा अप्सरसः स्तावा नाम ताभ्यः स्वाहा । इदं दक्षिणाभ्यो अप्सरोभ्यः स्तावाभ्यः, इदन्न मम ॥ १० ॥

अर्थ-सब भूतों का पालक शोभन ज्ञान से सम्पादित पृथिवी को धारण करने वाला यज्ञ है उस के सम्बन्ध में प्रसिद्ध को प्राप्त होने वाणी दक्षिणा धर्मात्मा विद्वानों को दान भी स्तुति के योग्य है यह विद्वानों को विदित है० शेष पूर्ववत् ॥

ओं प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वः । स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् । इदं प्रजापतये विश्वकर्मणे मनसि गन्धर्वाय इदन्न मम ॥ ११ ॥

ओं प्रजापति विश्वकर्मा मनो गन्धर्व स्तस्य ऋक्सामान्यपसरस एष्टिभ्यः एष्टयो नाम ताभ्यः स्वाहा । इदमृक्सामभ्योऽप्सरोभ्य-एष्टिभ्यः इदन्न मम ॥१२॥*

अर्थ-प्रजा का पति सब कार्यों को करने वाला वाणी को प्रेरणा करके धारण करने वाला मन है उस के सम्बन्ध से ही ऋग्वेद और सामवेद गानादि द्वारा अन्तरिक्ष में व्याप्त होते हैं वे ऋक और सामही ईश्वर से प्रार्थना के साधन हैं यह विद्वानों को प्रसिद्ध है । शेष पूर्व तुल्य ॥

इन बारह मन्त्रों से १२ आज्याहुति देनी तत्पश्चात् "जयाहोम" करना ।

---

* ये मन्त्र छः ही हैं परन्तु इन का भाग करके बारह आहुतियां दी जाती हैं ।

जयाहोम की १३ आज्याहुति ।

ओं चित्तं च स्वाहा । इदं चित्ताय, इदन्न मम ॥ १ ॥

अर्थ-चित्त-ज्ञान के आधार हृदय को " मेरे लिए देवे " ऐसे सम्बन्ध अगले मन्त्र की " प्रायच्छत् " क्रिया को लेकर सर्वत्र कर लेना चाहिए ।

ओं चित्तिश्च स्वाहा । इदं चित्यै इदंन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ-हृदय की चेतना ।

ओं आकूतं च स्वाहा । इदमाकूताय इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थ-कर्मेन्द्रिय ।

ओं आकूतिश्च स्वाहा । इदमाकूत्यै इदन्न मम ॥ ४ ॥

अर्थ-कर्मेन्द्रियों की प्रेरक शक्ति ।

ओं विज्ञातञ्चस्वाहा । इदं विज्ञाताय इदन्न मम ॥ ५ ॥

अर्थ-शिल्प विज्ञान ।

ओं विज्ञातिश्च स्वाहा । इदं विज्ञात्यै, इदन्न ॥ ६ ॥

अर्थ-शिल्प विज्ञान शक्ति ।

ओं मनश्च स्वाहा । इदं मनसे, इदन्न मम ॥ ७ ॥

अर्थ-सुख दुःख के ज्ञान का भीतरी साधन ।

ओं शक्वरीश्च स्वाहा । इदं शक्वरीभ्यः, इदन्न मम ॥ ८ ॥

अर्थ-मन की शक्तियां० ।

ओं दर्शश्च स्वाहा । इदं दर्शाय, इदन्न मम ॥ ९ ॥

अर्थ-दर्शेष्टि यज्ञ=अमावस्या का याग ।

ओं पौर्णमासं च स्वाहा । इदं पौर्णमासाय इदन्न मम ॥१०॥

अर्थ-पूर्णिमा सम्बन्धी यज्ञ ।

ओं बृहच्च स्वाहा । इदं बृहते, इदन्न मम ॥ ११ ॥

अर्थ-बड़प्पन ।

ओं रथन्तरञ्च स्वाहा इदं रथन्तराय इदन्न मम ॥ १२ ॥

अर्थ-साम विशेष ।

ओं प्रजापतिर्जयानिन्द्राय वृष्णे प्रायच्छदुग्रः पृतनाजयेषु तस्मै विशः समनमन्त सर्वाः स उग्रः स इहव्यो बभूव स्वाहा । इदं प्रजापतये जयानिन्द्राय, इदन्न मम ॥ १३ ॥

अर्थ-परमात्मा ने यज्ञादि द्वारा मनुष्यों की इष्ट सिद्धि की वर्षा करने वाले जीव के लिए जय देनेवाले मन्त्रों को अच्छे प्रकार पूर्व से ही दे रक्खा है । जय मन्त्रों के प्रभाव से ही इन्द्र शत्रुओं की सेनाओं को जीतने में प्रचण्ड होता है जीत के कारण ही सब मनुष्य उसके प्रति अच्छे प्रकार नमस्कार करते हैं वा कर चुके हैं वह जीतने वाला ही प्रचण्ड होता है और वह ही ग्रहण के योग्य होचुका है वा होता है ।

इन प्रत्येक मन्त्रों से एक २ करके जयाहोम की १३ आज्याहुति देनी तत्पश्चात् अभ्यातन होम इन मन्त्रों से करे—

अभ्यातन होम की १८ आज्याहुति ।

ओं अग्निर्भूतानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन ब्रह्मण्यस्मिन क्षत्रे ऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा ॥ इदमग्नये भूताना मधिपतये इदन्न मम ॥ १ ॥

अर्थ-भौतिक अग्नि सब तत्वों वा पदार्थों में मुख्य वा पदार्थों का रक्षक है वह मेरी रक्षा करे । इस ब्राह्मण समूह में इस प्रार्थना में इस आगे बैठी हुई कन्या के विषय में इस हवनादि कर्म में इस विद्वानों के आव्हान-बुलाने में ॥ १ ॥

ओं इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः स माऽवत्वास्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याꣳ स्वाहा। इदमिन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये, इदन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ–बड़े से बड़े पदार्थों में सर्वैश्वर्यवाली विद्युत् मुख्य है वा उन की रक्षक है०। शेष पूर्ववत् ॥

ओं यमः पृथिव्या अधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याꣳ स्वाहा। इदं यमाय पृथिव्याअधिपतये, इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थ–ऋतु ही इस सब पृथिवी का स्वामी है० शेष पूर्ववत् ॥

ओं वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः समावत्व स्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां पेवहूत्याꣳ स्वाहा। इदं वायवे, अंतरिक्षस्याधिपतये, इदन्न मम ॥ ४ ॥

अर्थ–पवन, अन्तरिक्ष लोक का स्वामी है० शेष पूर्ववत् ॥

ओं सूर्यो दिवोधिपतिः समावत्वास्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रे स्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ꣳ स्वाहा। इदं सूर्याय दिवोऽधिपतये, इदन्न मम ॥ ५ ॥

अर्थ–द्युलोक का सूर्य स्वामी है० शेष पूर्ववत्।

ओं चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यमास्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याꣳस्वाहा इदं चन्द्रमसे नक्षत्राणामधिपतये, इदन्न मम ॥ ६ ॥

अर्थ–नक्षत्रों का चन्द्रमा स्वामी है० शेष पूर्वधत् ॥

ओं बृहस्पति र्ब्रह्मणोऽधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳪ स्वाहा। इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोधिपतये इदन्न मम ॥ ७ ॥

अर्थ-बड़ों का पति परमात्मा वेद का स्वामी है० शेष

ओं मित्रः सत्यानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रे ऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳪ स्वाहा ॥ इदं मित्राय सत्यानामधिपतये इदन्न मम ॥ ८ ॥

अर्थ-सत्य व्यवहारों का सूर्यादि-प्रकाशक पदार्थ है० शेष पूर्व०

ओं वरुणोऽपामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳪ स्वाहा ॥ इदं वरुणायापामधिपतये, इदन्न मम ॥ ९ ॥

अर्थ-स्थूल जलों का स्वीकार योग्य सूक्ष्म जल है० शेष पूर्व०

ओं समुद्रः स्रोत्यानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳪस्वाहा। इदं समुद्राय स्रोत्यानामधिपतये, इदन्न मम ॥ १०

अर्थ-स्रोत से बहने वाले जलों का समुद्र० ।

ओं अन्नं साम्राज्यानामाधीपतिः स मावत्वास्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳪ स्वाहा। इदमन्नाय साम्राज्यानामधिपतये इदन्न मम ॥ ११ ॥

अर्थ-चक्रवर्तियों के ऐश्वर्यों का अन्न० ।

ओं सामऽओषधीनामधिपतिः स मावत्वास्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

त्त्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬं स्वाहा इदं सोमाय, औषधीनामधिपतये, इदन्न मम ॥ १२ ॥

अर्थ-ओषधियों की सोमलता० ॥ १२ ॥

ओं सविता प्रसवानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् त्त्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬंस्वाहा। इदं सवित्रे प्रसवानामधिपतये, इदन्न मम ॥ १३ ॥

अर्थ-फल, पुष्पादि का सूर्य० ।

ओं रुद्रः पशूनामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् त्त्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬंस्वाहा । इदं रुद्राय पशूनामधिपतये, इदन्न मम ॥ १४ ॥

अर्थ-पशुओं का व्याघ्रादि हिंसक जीवों को रुलाने वाला० ।

ओं त्वष्टा रूपाणामधिमतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् त्त्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬं स्वाहा । इदं त्वष्ट्रे रूपाणामधिपतये इदन्न मम ॥ १५ ॥

अर्थ-द्रष्टव्य पदार्थों का उत्तम शिल्पी० ।

ओं विष्णुः पर्वतानामधिमतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् त्त्रेऽस्यामा शिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ᳬं स्वाहा। इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये इदन्न मम ॥ १६ ॥

अर्थ-मेघों का यज्ञ० ।

ओं मरुतो गणानामधिपतयस्तेमावन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् त्त्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्या ᳬं स्वाहा । इदं मरुद्भ्यो गणानामधिपतिभ्यः इदन्न मम ॥ १७ ॥

अर्थ-समूहों के देवता वे० ।

ओं पितरः पितामहाः परेऽवरे ततास्ततामहाः इह मावन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬस्वाहा । इदं पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरेभ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यः इदन्न मम ॥ १८ ॥

अर्थ-पिता, चाचा आदि पिताओं के पिता उत्कृष्ट कोटि और नीचे दरजे के और जो फैले हुए कुटुम्ब के लोग हैं, वे तथा उन लोगों में भी पूजनीय हैं वे० शेष पूर्ववत् ॥

इस प्रकार अभ्यातन होम की १८ अठारह आज्याहुति दिए पीछे-

आठ विशेष आज्याहुति ।

ओं अग्निरैतु प्रथमो देवतानां सोऽस्यै प्रजाम् मुंचतु मृत्यु पाशात् । तदयं राजा वरुणोऽनुमन्यतां यथेयं स्त्रीपौत्रमघन्नरोदात् स्वाहा । इदमग्नये-इदन्न मम ॥ १ ॥

अर्थ-देवताओं में मुख्य अकाल मृत्यु के बन्धन को भस्म करने वाला अग्नि देव अच्छे प्रकार प्राप्त हो । और वह अग्नि देव इस कन्या के लिए सन्तान को देवे । उस प्रजादान का यह सब से श्रेष्ठ परमात्मा रूपी राजा पश्चात् सहायक हो जिस प्रकार से कि यह स्त्री पुरुष सम्बन्धी दुःख को न रोवे न प्राप्त हो ॥ १ ॥

ओं इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः । अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्द मभिविबुध्यतामियं स्वाहा । इदमग्नये-इदन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ--गृहस्थ सम्बन्धी अग्निहोत्र की अग्नि इस कन्या की ईश्वर करे कि रक्षा करे । इस स्त्री की सन्तान को परमात्मा बड़ी आयु प्राप्त करावे । और यह स्त्री बन्ध्यात्व दोष से रहित होकर जीने वाले सन्तानों की माता हो । और यह स्त्री पुत्र सम्बन्धी आनन्द को प्राप्त होकर विशेषरूप से जाने ॥ २ ॥

ओं स्वस्तिनो अग्ने दिव आपृथिव्या विश्वानि धेह्ययथा यजत्र । यदस्यां महि दिवि जातं प्रशस्तं तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रं स्वाहा । इदमग्नये-इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थ--हे यज्ञ करने वाले की रक्षा करने वाले अग्निदेव हमारे सब कर्मों को, जो कि अन्यथा प्रतिकूल हुए हैं, उन को सम्पूर्ण अनुकूल करके स्थापन करो । और आकाश लोक तक पृथिवी तक जो महिमा--महत्व है उसे हम लोगों में रक्खो और जो इस पृथिवी में पैदा हुआ नानाप्रकार का धन है उसे और जो आकाश लोक में श्रेष्ठ वस्तु है, उसे हम लोगों में स्थापित करो ॥ ३ ॥

ओं सुगन्नु पन्थां प्रदिशन् न एहि ज्योतिष्मद् धेह्यजरन्न आयुः, अपैतु मृत्युरमृतं आगाद्वैवस्वतोनो अभयं कृणोतु स्वाहा । इदं वैवस्वताय । इदन्न मम ॥ ४ ॥

अर्थ--हे परमात्मन् ! आप सुख से प्राप्तव्य मार्ग का हमारे मन में उपदेश करते हुए ही हम को प्राप्त हों । और हमें प्रकाश युक्त दोष रहित जरा वृद्धावस्था के विकारों से रहित जीवन को दीजिये आयु का प्रतिबन्धक मृत्यु हम से हट जावे । मेरे लिए मोक्ष अच्छे प्रकार प्राप्त हो सूर्य्य का जैसा आप का प्रकाश हमें भय रहित करे ।

ओं परंमृत्यो अनुपरेहि पन्थां यत्र नो अन्य इतरो देवयानात्
चक्षुष्मतेशृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्त्स्वाहा ।
इदं मृत्यवे--इदन्न मम ॥ ५ ॥

अर्थ-हे मृत्यु के अधिष्ठातृदेव ! जहां कहीं हम लोगों के बीच में दूसरा विद्वानों के गन्तव्य मार्ग से पतित हुआ पुरुष है उस को द्वितीय लोक के सन्मुख हम से पराङ्मुख करके ले जाओ । बिना आंख कान के भी देखने और सुनने वाले तुझ से प्रार्थना करता हूं कि हमारी सन्तान को मत नष्ट कर और अन्य देश के वीरों को भी मत नष्ट कर ॥ ५ ॥

ओं द्यौस्ते पृष्ठंरक्षतु वायुरूरू अश्विनौ च । स्तनन्धयस्ते पुत्रान्त्स वितामिरक्षत्वावाससः परिधानाद् बृहस्पतिर्विश्वे देवा अभिरक्षन्तु पश्चात्स्वाहा । इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः--इदन्न मम ॥६॥

अर्थ-हे कन्ये ! तेरे पृष्ठ भाग को द्युलोकस्थ सूर्य रक्षा करे । और विद्वान् वैद्य वातादि के रोग से तेरे ऊर्वादि नीचे के प्रदेशों की रक्षा करें । सभ्यता पूर्वक वस्त्र पहनने आदि के पूर्व तेरे दुग्ध पीते बालकों की उत्पादक पिता रक्षा करे पीछे से उन बालकों की गुरुकुल का आचार्य और देश के सब विद्वान् लोग रक्षा करें ॥ ६ ॥

ओं मा ते गृहेषु निशि घोष उत्थादन्यत्रत्वद्रुदत्यः संविशन्तु । मा त्वंरुदत्युर आवधिष्ठा जीवपत्नी पतिलोके विराज पश्यन्ती प्रजांसुमनस्यमानांस्वाहा । इदमग्नये--इदन्न मम ॥ ७ ॥

अर्थ-हे कन्ये ! रात्रि में तेरे घरों में आर्तनाद-दुःख देने वाले शब्द ईश्वर करे कि न उठें । तुझ धर्माचारिणी से अधर्मियों के यहां

स्त्रियां रोती हुई सोवें वा घुसें । तू रोती हुई दुःख उठाती हुई अपने घर में, अपने आश्रित भृत्यादिकों को मत मार । जीवित पति-का होती हुई पति के घर में सुशोभित हो, सुप्रसन्न चित्त अपनी सन्तति को देखती हुई तू सुशोभित हो ॥ ७ ॥

ओं अप्रजस्यं पौत्रमर्त्यं पाप्मानमुत वा अघम् । शीर्ष्णः स्रज-मिवोन्मुच्य द्विषद्भ्यः प्रतिमुञ्चामि पाशंस्वाहा। इदमग्नये-इदन्न मम

अर्थ—हे कन्ये ! तेरे पुत्र शून्यता दोष को और पुत्र सम्बन्धी दुःख को अथवा पाप रूप व्यसन को और द्वेष करने वाले अधर्मियों से होने वाले बन्धन को, मस्तक से माला को जैसे उतार देते हैं वैसे ही मैं दूर हटाने की प्रतिज्ञा करता हूं ॥ ८ ॥

इन प्रत्येक मन्त्रों से एक२ आहुति करके आठ आज्याहुति देवे फिर-

चार साधारण आज्याहुति ।

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदन्न मम ।
ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदन्न मम ।
ओं स्वरादित्यायस्वाहा॥ इदम्आदित्याय-इदन्न मम
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः--इदन्न मम ।

इत्यादि चार मन्त्रों से ४ चार आज्याहुति देवे । ऐसे होम करके वर आसन से उठ पूर्वाभिमुख बैठी हुई वधू के सम्मुख पश्चि-माभिमुख खड़ा रह कर अपने वाम हस्त से वधू का दहना हाथ चत्ता धर के ऊपर को ऊंचाना और अपने दक्षिण हाथ से वधू के उठाये हुए दक्षिण हस्तांजलि अंगुष्ठा सहित चत्ती ग्रहण करके वर-

(मूल विवाह का आरम्भ अथवा पाणि ग्रहण के ६ मन्त्र,)

इस क्रिया में वर खड़ा रहे।

ओं गृभ्णामितेसौभगत्वायहस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः। भगोअर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ १ ॥

अर्थ-हे वरानने ! जैसे मैं ऐश्वर्य सुसन्तानादि सौभाग्य की बढ़ती के लिए तेरे हाथ को ग्रहण करता हूं, तू मुझ पति के साथ जरावस्था को सुख पूर्वक प्राप्त हो ।

कन्या ।

हे वीर ! मैं सौभाग्य की वृद्धि के लिए आप के हस्त को ग्रहण करती हूं आप मुझ पत्नी के साथ वृद्धावस्था पर्यन्त प्रसन्न और अनुकूल रहिये आप को मैं और मुझ को आप आज से पति पत्नी भाव करके प्राप्त हुए हैं सकल ऐश्वर्ययुक्त न्यायकारी सब जगत् की उत्पत्ति का कर्त्ता बहुत प्रकार के जगत् का धर्त्ता परमात्मा और ये सब सभा मण्डप में बैठे हुए विद्वान् लोग गृहाश्रम कर्म के लिए तुझको मुझे और मुझे को तुझे देते हैं आज से मैं आप के हाथ और आप मेरे हाथ बिक चुके हैं कभी एक दूसरे का अप्रियाचरण न करेंगे ॥ १ ॥

वर ।

ओं भगस्ते हस्तमग्रभीत् सविता हस्तमग्रभीत् । पत्नी त्वमसि धर्मणाऽहं गृहपतिस्तव ॥ २ ॥

अर्थ-हे प्रिये ऐश्वर्ययुक्त मैं तेरे हाथ को ग्रहण करता हूं तथा धर्मयुक्त मार्ग में प्रेरक मैं तेरे हाथ को ग्रहण कर चुका हूं तू धर्म से मेरी पत्नी भार्या है और मैं धर्म से तेरा गृहपति हूं हम दोनों मिल के घर के कामों की सिद्धि करें और जो दोनों का अप्रियाचरण कर्म है उस को कभी न करें जिससे घर के सब काम सिद्ध, उत्तम सन्तान, ऐश्वर्य और सुख की बढ़ती सदा होती रहे ॥ २ ॥

ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वाऽदाद् बृहस्पतिः ।
मया पत्या प्रजावति शंजीव शरदः शतम् ॥३॥

अर्थ-हे अनघे ! सब जगत् का पालन करने हारे परमात्मा ने जिस तुझ को मुझे दिया है यही तू मेरी पोषण करने योग्य पत्नी हो, हे तू (पत्नि) मुझ पति के साथ सौ शरद् ऋतु अथवा शत वर्ष पर्यन्त सुख पूर्वक जीवन धारण कर वैसे ही वधू भी वर से प्रतिज्ञा करावे

कन्या ।

हे भद्र वीर ! परमेश्वर की कृपासे आप मुझे प्राप्त हुए हो मेरे लिए आप के बिना इस जगत् में दूसरा पति अर्थात् स्वामी पालन करने हारा सेव्य इष्ट देव कोई नहीं है न मैं आप से अन्य दूसरे किसी को मानूंगी जैसे आप मेरे सिवाय दूसरी किसी स्त्री से प्रीति न करोगे । वैसे मैं भी किसी दूसरे पुरुष के साथ प्रीतिभाव से न वर्त्ता करूंगी, आप मेरे साथ सौ वर्ष पर्यन्त आनन्द से प्राण धारण कीजिये ॥३॥

त्वष्टा व्यासो व्यदधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् । तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परिधत्तां प्रजया ॥ ४ ॥

अर्थ-हे शुभानने ! जैसे इस परमात्मा की सृष्टि में तथा आप्त विद्वानों की शिक्षा से दम्पती होते हैं जैसे विजुली सब में व्याप्त हो रही है वैसे तू मेरी प्रसन्नता के लिए सुन्दर वस्त्र और आभूषण तथा मुझ से सुख को प्राप्त हो इस मेरी और तेरी इच्छा को परमात्मा सिद्ध करे जैसे सकल जगत् की उत्पत्ति करने द्वारा परमात्मा और पूर्ण ऐश्वर्य्ययुक्त उत्तम प्रजा से इस मुझ नर की स्त्री को आच्छादित शोभायुक्त करे वैसे मैं इस सब से सूर्य की किरण के समान तुझ को वस्त्र और भूषणादि से सुशोभित सदा रक्खूंगा।

कन्या।

हे प्रिय ! आप को मैं इसी प्रकार सूर्य के समान सुशोभित आनन्द-अनुकूल प्रियाचरण करके ऐश्वर्य वस्त्राभूषण आदि से सदा आनन्दित रक्खूंगी ॥ ४ ॥

इन्द्राग्नी द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनो भा । बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु ॥ ५ ॥

अर्थ-हे मेरे सम्बन्धी लोगो ! जैसे बिजुली और प्रसिद्ध अग्नि सूर्य और भूमि अन्तरिक्षस्थ वायु प्राण और उदान तथा ऐश्वर्य सद्वैद्य और सत्योपदेशक, दोनों श्रेष्ठ न्यायकारी, बड़ी प्रजा का, पालन करने द्वारा राजा, सभ्य मनुष्य, सब से बड़ा परमात्मा, और चन्द्रमा तथा सोमलतादि औषधी गण, सब प्रजा की वृद्धि और पालन करते हैं जैसे इस मेरी स्त्री को प्रजा से बढ़ाया करते हैं वैसे तुम भी बढ़ाया करो जैसे मैं इस स्त्री को प्रजा आदि से सदा बढ़ाया करूंगा।

कन्या ।

वैसे मैं भी अपने पति को सदा आनन्द ऐश्वर्य और प्रजा से बढ़ाया करूंगी जैसे दोनों मिल के प्रजा बढ़ाया करते हैं वैसे तू और मैं मिल के गृहाश्रम के अभ्युदय को बढ़ाया करें ॥ ५ ॥

अहं विष्यामि मयि रूपमस्या वेददित्पश्यन्मनसा कुलायम् । न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रन्थानो वरुणस्य पाशान् ॥ ६ ॥

अर्थ—हे कल्याणक्रोड़े ! जैसे मन से कुल की वृद्धि को देखता हुआ मैं इस तेरे रूप को प्रीति से प्राप्त और इस में प्रेम द्वारा व्याप्त होता हूं वैसे तू मेरी वधू मुझमें प्रेम से व्याप्त हो के अनुकूल व्यवहार को प्राप्त होवे जैसे मैं मन से भी इस तुझ वधू के साथ चोरी को छोड़ देता हूं और किसी उत्तम पदार्थ का चोरी से भोग नहीं करता हूं आप पुरुषार्थ से शिथिल होकर भी उत्कृष्ट व्यवहार में विघ्न रूप दुर्व्यसनी पुरुष के बन्धनों को दूर करता हूं वैसे ही, यह वधू भी किया करे इसी प्रकार वधू भी स्वीकार करे कि मैं भी इसी प्रकार आप से बर्ताव करूंगी ॥ ६ ॥

केवल सूचनार्थ एक परिक्रमा ।

इन पाणिग्रहण के छः मन्त्रों को बोले पश्चात् वधू की हस्ताञ्जली पकड़ के उठावे और वह कलश जो कुण्ड की दक्षिण दिशा में प्रथम स्थापन किया था, वही पुरुष जो कलश के पास बैठा था, था, वर वधू के साथ २ उसी लशक को लेके चले, यह कुण्ड की दोनों प्रदक्षिणा करें, फिर वरः—

(ये प्रतिज्ञा का बोधक मन्त्र है)

ओं अमोऽहमस्मि सा त्व ँ सा त्वमस्य मोऽहं सामाहमस्मि ऋक्त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वं तावेव विवहावहै सह रेतो दधावहै। प्रजां प्रजं-नयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्। ते सन्तु जर-दष्टयः सं प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतम् ॥ ७ ॥

अर्थ—हे बधू! जैसे मैं ज्ञानवान् ज्ञानपूर्वक तेरा ग्रहण करने वाला होता हूं वैसे सो तू भी ज्ञान पूर्वक मेरा ग्रहण करने हारी है जैसे मैं अपने पूर्ण प्रेम से तुझ को ग्रहण करता हूं वैसे सो-मैंने ग्रहण की हुई तू, मुझको भी ग्रहण करती है मैं सामवेद के तुल्य प्रशंसित हूं हे बधू। तू ऋग्वेद के तुल्य प्रशंसित है तू पृथिवी के समान गर्भादि गृहाश्रम के व्यवहारों को धारण करने हारी है और मैं वर्षा करने हारे सूर्य के समान हूं वह तू और मैं दोनों ही प्रसन्नता पूर्वक विवाह करें साथ मिल के वीर्य को धारण करें उत्तम प्रजा को उत्पन्न करें बहुत पुत्रों को प्राप्त होवें वे पुत्र जरावस्था के अन्त तक जीवन युक्त रहें अच्छे प्रकार एक दूसरे से प्रसन्न एक दूसरे में रुचि युक्त अच्छे प्रकार विचार करते हुए सौ शरद अर्थात् शत वर्ष पर्यंत एक दूसरे को प्रेम की दृष्टि से देखते रहें सो वर्ष पर्यन्त आनन्द से जीते रहें और सौ वर्ष पर्यन्त प्रिय बचनों को सुनते रहें ॥ ७ ॥

इन प्रतिज्ञा मन्त्रों से वर प्रतिज्ञा करके, पश्चात् वर, वधू के पीछे रह के वधू के दक्षिण और समीप में जा उत्तराभिमुख खड़ा रह के वधू की दक्षिणाञ्जली अपनी दक्षिणाञ्जली से पकड़ के दोनों खड़े रहें और वह पुरुष पुनः कुण्ड के दक्षिण में कलश लेके बैठे वधू की माता अथवा भाई, जो प्रथम चावल और ज्वार की धाणी जो सूप में रक्खी थी उस को बायें हाथ में लेके दहिने हाथ से वधू का दक्षिण पग उठा के पत्थर की शिला पर चढ़वावे और उस समय वर—

शिलारोहण ।

ओं आरोहेममश्मानमश्मेव त्वं स्थिरा भव ।
अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवबाधस्व पृतनायतः ॥१॥

अर्थ हे देवी ! इस पत्थर के ऊपर चढ़ और इस पत्थर के तुल्य तू धर्म कार्य में दृढ़ हो । कलहकारियों को आक्रमण कर के दबा करके स्थित हो और पतनाभिर्यन्ते इति पतनायस्तान् समूहों को लेकर लड़ाई के लिए यत्न करने वालों को भी नीचा कर के पीड़ित कर अगनोद्यम बना ॥

इस मन्त्र को बोले, फिर वधू वर कुण्ड के समीप आके पूर्वाभिमुख दोनों खड़े रहें और यहां वधू दक्षिण की ओर रह के अपनी दक्षिण हस्ताञ्जली को वर की हस्ताञ्जली पर रक्खे, फिर वधू की मा वा भाई जो बायें हाथ में धाणी का सूप पकड़ के खड़ा रहा हो, वह धाणी का सूप भूमि पर धर अथवा किसी के हाथ में देके जो वधू वर की एकत्र की हुई अर्थात् नीचे वर की और ऊपर वधू की हस्ताञ्जली है उस में प्रथम थोड़ा घृत सिंचन करके पश्चात् प्रथम सूप में से दहिने हाथ की अञ्जलि से दो वार ले के वर वधू की

एकत्र की हुई अञ्जलि में धाणी डाले पश्चात् उस अञ्जलिस्थ धाणी पर थोड़ा सा घी सिंचन करे पश्चात् वधू, वरकी हस्ताञ्जलि सहित अपनी हस्ताञ्जलि को आगे से नमाके--

(विवाह का एक मुख्य अङ्ग लाजा, होम. लाजा होम के मन्त्र)

कन्या बोले।

ओं अर्यमणं देवं कन्या अग्निमयक्षत। स नो अर्यमादेवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा। इदमर्यम्णे, अग्नये इदन्न मम ॥ १ ॥

अर्थ-कन्या की उक्ति) कन्याएं न्यायकारी नियन्ता जिस पूजनीय देव ईश्वर की पूजा करती हैं वह न्यायकारी दिव्यस्वरूप परमात्मा हम को इस पितृकुल से छुड़ावे और पति के साहचर्य से न छुड़ावे॥

ओं इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका। आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा। इदमग्नये-इदन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ-भुने हुए चावलकी खीलों को अग्नि में छोड़ने वाली यह स्त्री पति के समीप कहती है कि मेरा पति ईश्वर कृपा से दीर्घजीवी हो। और मेरे कुटुम्ब के लोग धनधान्यादि से बढ़ें॥

ओं इमान्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव। मम तुभ्यं च संवदनं तदग्निरनुमन्यतामियꣳ स्वाहा। इदमग्नये, इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थ—हे पते ! मैं तेरी वृद्धि के लिए इन खीलों को अग्नि में छोड़ती हूं। मेरा और तेरा परस्पर अनुराग हो। उस अनुराग में पूजनीय परमात्मा सहायक हो।

इन तीन मन्त्रों में से एक २ मन्त्र को वधू बोलकर एक २ बार थोड़ी थोड़ी धाणी की आहुति तीन वार प्रज्वलित इन्धन पर देवे। फिर वर—

हस्तांजलि पकड़ने का मन्त्र।

ओं सरस्वती प्रेदमव सुभगे वाजिनीवति।
यान्त्वा विश्वस्य भूतस्य प्रजयामस्याग्रतः।
यस्यां भूतꣳ समभवद्यस्यां विश्वमिदं जगत्।
तामद्य गाथां गास्यामि या स्त्रीणामुत्तमं यशः॥१॥

अर्थ—सुन्दर ऐश्वर्य वाली ! अन्नादि सन्तति वाली ! हे वाणी आदि पदार्थों की कारणीभूत प्रकृति ! इस हवनादि कर्म की अच्छे प्रकार रक्षा कर। इस दृश्यमान सब पृथिव्यादि की जिस तुझको स्थूल सृष्टि के पूर्व कारण रूप से विद्यमान उत्पादन करने वाली, विद्वान् लोग कहते हैं। जिस तुझ में पृथिव्यादि उत्पन्न हुआ है और जिस तुझ में यह सब जगत् ही उत्पन्न होकर विद्यमान् है आज से उसी तेरे प्रति गुण प्रभाव स्तुति का गान किया करूंगा जो गाथा सुनने पर स्त्रियों के लिए अच्छी कीर्ति को देगी॥

इस मन्त्र को बोल के अपने दहने हाथ की हस्तांजलि से वधू की हस्तांजलि पकड़ के वर—

ओं तुभ्यमग्ने पर्यवहन्त्सूर्या वहतुना सह ।
पुनः पतिभ्योजायां दाऽग्ने प्रजया सह ॥

अर्थ-हे पूजनीय परमात्मन् ! तुम्हारे लिए-तुम्हारी ही परिचर्या के लिए हमने इस कन्या को स्वीकार किया है, यह कन्या सूर्य की दी हुई शोभा को प्राप्त हो और साथ ही इसका पतिरूप-पुरुष, मैं भी प्रतिष्ठादि जन्य शोभा को प्राप्त होऊं । फिर कालान्तर में हे ईश्वर पुत्रों के साथ मुझ पति के लिए भार्यत्व को प्राप्त हुई इस कन्या को दीजिए ॥

ओं कन्यला पितृभ्यः पतिलोकं पतीयमपदीक्षामयष्ट । कन्या उत त्वया वयं धारा उदन्या इवातिगाहेमहि द्विषः ॥ २ ॥

अर्थ--यह कन्या पिता भ्राता आदि को छोड़ कर पति के गृह के प्रति पति सम्बन्धी नियम को स्वीकार कर चुकी है और यह कन्या उस से भिन्न मुझ पति व्यक्ति के साथ ही सर्वदा रहे, जिससे कि हम मिल कर जल की वेग वाली धाराओं की नाईं जल की जैसे प्रवल धाराएं अपने संमुख आगे वाले तृणादि को दबा कर बहा ले जाती हैं, वैसे ही कामादि शत्रुओं को उलंघन करके पश्चात् विलोडन करें-दबावें ।

इन मन्त्रों को पढ़ यज्ञकुण्ड की एक प्रदक्षिणा करके यज्ञकुण्ड के पश्चिम भाग में पूर्व की ओर मुख करके थोड़ी देर दोनों खड़े रहें

और सब मिल के ४ चार परिक्रमा करें अन्त में यज्ञकुण्ड के पश्चिम में थोड़ा खड़े रह के उक्त रीति से चार बार क्रिया पूरी हुए पश्चात् यज्ञकुण्ड की प्रदक्षिणा करके उसके पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख वधू वर खड़े रहें, पश्चात् वधू की मा अथवा भाई उस सूप को तिरछा करके उस में बाकी रही हुई धाणी को वधू की हस्तांजलि में डाल देवे पश्चात् वधू—

ओं भगाय स्वाहा । इदं भगाय । इदन्न मम ॥

अर्थ—ऐश्वर्य के लिए० ।

इस मन्त्र को बोल के प्रज्वलित अग्नि पर वेदी में उस धाणी की एक आहुति देवे पश्चात् वर, वधू को दक्षिण भाग में रखके कुण्ड के पश्चिम पूर्वाभिमुख बैठ के—

ओं प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये, इदन्न मम ॥

अर्थ—प्रजा के पति—परमात्मा के लिए० ।

इस मन्त्र को बोल के स्रुवा से एक घृत की आहुति देवे । तत्पश्चात् एकान्त में जाके वधू के बंधे हुए केशों को वर खोले और

ओं प्र त्वा मुंचामि वरुणस्य पाशाद्येन त्वा बध्नात्सविता सुशेवः । ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोकेऽरिष्टान्त्वा सह पत्या दधामि ॥ १ ॥

अर्थ हे वधु ! जिस बन्धन से शोभनसुखस्वरूप उत्पादक

मातृजन तुझे बांध चुका है उसी श्रेष्ठ स्त्रीजनके किए केशों के बन्धन से तुझे अच्छे प्रकार छुड़ाता हूं। और यज्ञ के स्थान में और अन्य सुन्दर कार्यों के स्थान में उपद्रव रहित करके तुझे मैं पति भाव के साथ पोषण करने की प्रतिज्ञा करता हूं।

प्रेतो मुंचामि नामुतस्सुबद्धाममु तस्करम् ।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगा सति ॥ २ ॥

अर्थः—ईश्वर वाक्य—हे ऐश्वर्य वाले वीर्य सेक्ता विवाहित पुरुष ! जैसे यह कन्या अच्छे ऐश्वर्य वाली और सुंदर पुत्र वाली हो, वैसे ही कर तथा प्रतिज्ञा कर कि हे कन्ये ? इस पितृकुल से तुझे छुड़ाता हूं उस पति के घर से नहीं छुड़ाता किन्तु इस पति गृह के साथ तो तुझे अच्छे प्रकार सम्बद्ध कर चुका हूं।

विवाह का अन्तिम प्रधान अङ्ग-सप्त पदी

इन दोनों मन्त्रों को बोल के छोड़े तत्पश्चात् सभा मण्डप में आके सप्तपदी विधि का आरम्भ करे। इस समय वर के उपवस्त्र के साथ वधू के उत्तरीय वस्त्र की गांठ देनी इसे जोड़ा कहते हैं वधू वर दोनों जने आसन पर से उठके वर अपने दक्षिण हाथ से वधू की दक्षिण हस्तांजलि पकड़ के यज्ञकुण्ड के उत्तर भाग में जावें तत्पश्चात् वर अपना दक्षिण हाथ वधू के दक्षिण स्कन्धे पर रख के दोनों समीप समीप खड़े रहें तत्पश्चात् वर—

मा सव्येन दक्षिणमतिक्राम ।

अर्थ—हे वधू ! बायें पैर से दाहिने पैर को मत उलंघन कर अर्थात् आगे बायें पाद को मत रख।

ऐसा बोल के वधू को उसका दक्षिण पग उठवा के चलने के लिए आज्ञा देवे और--

ओं इषे एकपदी भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वानयतु पुत्रान् विन्दावहै बहूंस्ते सन्तु जरदष्टयः ॥ १ ॥

हे कन्ये ! अन्नादि के लिए, तू एक पैर चलने वाली हो और वही तू मेरे अनुकूल हो, तेरी अनुकूलता संपादन के निमित्त, व्यापक परमात्मा तुझे अच्छे प्रकार प्राप्त करे। हम तुम दोनों मिलकर बहुत से पुत्रों को लाभ करें, और वे पुत्र वृद्धावस्था पर्यन्त जीने वाले हों।

इस मन्त्र को बोल के वर अपने साथ वधू को लेकर ईशान दिशा में एक पग चले और चलावे।

ओं ऊर्ज्जे द्विपदी भव० ॥२॥ इस मन्त्र से दूसरा

ओं रायस्पोषाय त्रिपदी भव० ॥३॥ इससे तीसरा

ओं मायोभवाय चतुष्पदी भव० ॥४॥ इससे चौथा

ओं प्रजाभ्यः पंचपदी भव० ॥५॥ इससे पांचवां

ओं ऋतुभ्यः षटपदी भव० ॥६॥ इससे छठा

ओं सखे सप्तपदी भव०॥७॥ इससे सातवां पग चलावे

अर्थ—बल संपादन के लिए दो पैर वा दूसरा पैर चलने वाली०

अर्थ—धन वा ज्ञान की पुष्टि के लिए तीन पैर चलने वाली०।

अर्थ--मायःसुखम्। सुख की उत्पत्ति के लिए चौथा पैर चलने वाली०।

अर्थ--सन्तानों के पालन के लिए पांचवां पैर चलने वाली० ।

अर्थ--ऋतुओं के अनुकूल व्यवहार संपादन के लिये छठा पैर चलने वाली हो ।

अर्थ--यह हेतु गर्भ सम्बोधन है। हे मित्रवद् वर्तमान। मित्रता सम्पादन के लिए सात पैर वा सातवां पैर चलने वाली०

शेष पूर्ववत् सातों मन्त्रों में जान लेना चाहिए।

इस मन्त्र से सातवां गप चलना। इस रीति से इन सात मन्त्रों से सात पग ईशान दिशा में चलाके वधू वर दोनों गांठ बंधे हुए शुभासन पर बैठें तत्पश्चात् प्रथम से जो जल के कलश को लेके यज्ञ कुण्ड की दक्षिण की ओर बैठाया था वह पुरुष उस पूर्व स्थापित जल कुम्भ को लेके वधू वर के समीप आवे और उसमें से थोड़ा सा जल लेके, वर वधू के, मस्तक पर छिटकावे और वर--

(मस्तक पर जल के छींटे देना)

ओं आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥ १ ॥

अर्थ--हे जल ! जिससे कि तुम सुख देने वाले होते हो अतः वैसे तुम हमको अन्न के लिये धारण करो और बड़े रमणीय दर्शन के लिए हमें धारण करो ॥

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः । उशतीरिव मातरः ॥ २ ॥

अर्थ--हे जल ! तुम्हारा जो अत्यन्त कल्यणकारी रस है उसे हमें इस लोक में उपयुक्त कराओ। पुत्र समृद्धि को चाहने वाली माताएं जैसे अपने स्तन के रस को सेवन कराती हैं वैसे ही ॥

तस्मा ऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ ।
आपो जनयथा च नः ॥ ३ ॥

अर्थ–हे जलो ! जिस अन्न के निवास के लिये तुम ओषधियों को तृप्त करते हो उसी अन्न के लिए हम पर्याप्त रूप से तुम्हें प्राप्त करते हैं और तुम हम को पुत्र पौत्रादि के उत्पादन करने में प्रयुक्त करो ।

ओं आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः
शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥ ४ ॥

अर्थ—जो जल कल्याण के हेतु भूत हैं अत्यन्त अभ्युदयकारी हैं सुख पहुंचानेवाले हैं, अधिक सुख देनेवाले हैं, वे जल तेरी निरोगता को करें ।

इन चार मन्त्रों को बोले । तत्पश्चात् वर वधू वहांसे उठ के—सूर्य्यावलोकन करें ।

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम
शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम
शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १ ॥

अर्थ—हे सूर्यवत् प्रकाशक परमेश्वर ! आप विद्वानों के हितकारी शुद्ध नेत्र तुल्य सब के दिखाने वाले, अनादि काल से सबके

ज्ञाता है उस आपको हम सौ वर्ष तक ज्ञान द्वारा देखें और आप की कृपा से सौ वर्ष तक हम जीयें। सौ वर्ष तक दीनतारहित हों और सौ वर्ष से अधिक भी देखें, जीवें, सुनें और अदीन रहें ॥

इस मन्त्र को पढ़ के सूर्य का अवलोकन करें। तत्पश्चात् वर वधू के दक्षिण स्कन्धे पर से अपना दक्षिण हाथ लेके उस से वधू का हृदयस्पर्श करके--

ओं मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं ते अस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम् ॥

अर्थ--हे वधू! तेरे अन्तः करण और आत्मा को अपने कर्म के अनुकूल धारण करता हूँ मेरे चित्त के अनुकूल तेरा चित्त, सदा रहे मेरी वाणी को तू एकाग्र चित्त से सेवन किया कर, प्रजा का पालन करने वाला परमात्मा तुझ को मेरे लिये नियुक्त करे ॥

इस मन्त्रको बोले और उसी प्रकार वधू भी अपने दक्षिण हाथ से वर के हृदय का स्पर्श करके इसी ऊपर लिखे हुए मन्त्र को बोले ॥

तत्पश्चात् वर वधू के मस्तक पर हाथ धरके--

ओं सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत। सौभाग्यमस्यै दत्वा याथाऽऽस्तं विपरेतन ॥

अर्थ--हे विद्वान लोगो यह वधू शोभन मङ्गल स्वरूप है अतः इस कन्या के साथ मेल रक्खो और इसको मङ्गल दृष्टि से देखो और

इस के लिए सौभाग्य का आशीर्वाद देकर अपने अपने घर के प्रति जाओ। और विशेष रूप से पराङ्मुख होकर न जाओ किन्तु पुत्रादि के मङ्गल की आशा से फिर भी आने के लिए जाओ॥

इस मन्त्र को बोल के कार्यार्थ आये हुये लोगों की ओर अवलोकन करना और इस समय सब लोग—

आशीर्वाद

ओं सौभाग्यमस्तु। ओं शुभं भवतु।

अर्थ-- धन धान्यादि संपन्नता हो कल्याण हो।

(विवाह की पूर्व विधि समाप्त)

इस वाक्य से आशीर्वाद देवें तत्पश्चात् वधू वर यज्ञकुण्ड के समीप पूर्ववत् बैठ के दोनों

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतंकरोतुमे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामनां समर्द्धयित्रे, सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते, इदन्न मम॥

इस स्विष्टकृत् मन्त्र से ? आज्याहुति और—

ओं भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये इदन्न मम॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे--इदन्न मम॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्न मम॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदं न मम॥

अर्थ—प्रकाशक परमात्मा के लिये सुहुत हो।

इत्यादि चार मन्त्रों से चार आज्याहुति देवें और इस प्रमाणे विवाह के विधि पूरे हुये पश्चात् दोनों जने आराम करें इस रीति से थोड़ासा विश्राम कर के विवाह की उत्तर विधिकरें। यह उत्तर विधि सब वधू के घर की ईशान दिशा में विशेष कर के एक घर प्रथम से बना रक्खा हो वहां जाके करनी तत्पश्चात् सूर्य अस्त हुये पीछे आकाश में नक्षत्र दीखें उस समय वधू वर यज्ञकुण्ड के पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख आसन पर बैठें और निम्न मंत्र से अग्न्याधान करे।

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव व्वरिम्णात। स्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे

यदि प्रथम ही सभामण्डप ईशान दिशा में हो और प्रथम अग्न्याधान भी किया हो तो अग्न्याधान न करे

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जात वेदस्तेनेध्यस्व-वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्च-सेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदन्नमम ॥ १ ॥

इत्यादि चार मन्त्रों से समिदाधान कर के जब अग्नि प्रदीप्त होवे तब—

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इद मग्नये इदन्नमम॥

ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदन्न मम ॥

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये इदन्नमम॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय—इदन्न मम॥

अर्थ—भौतिक अग्नि के लिये सुहुत हो।

इत्यादि चार मन्त्रों से आघारावाज्य भागाहुति चार और—

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नयेइदन्न मम ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदन्न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय-इदन्नमम॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥

इदमाग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदं न मम ॥

अर्थ—प्रकाश स्वरूप परमात्मा के लिये सुहुत हो।

इत्यादि चार मन्त्रों से चार व्याहृति आहुति ये सब मिलके आठ आज्याहुति देंवें तत्पश्चात् प्रधान होम निम्न लिखित मन्त्रों से करें।

ओं लेखासन्धिषु पक्ष्मस्वारोकेषु च यानिते।
तानि ते पूर्णाहुत्या सर्वाणि शमयाम्यहं स्वाहा।
इदं कन्यायै, इदन्न मम ॥ १ ॥

अर्थ—हे कन्ये ! रेखा—मस्तकादि रेखाओं की सन्धियों में नेत्रों के लोमों मे और नाभिरध्रादिको में तेरे जो बुरे चिह्न होंगे तेरे उन सबों को इस पूर्णाहुति के द्वारा मैं (पति) शमन करने की प्रतिज्ञा करताहूं ॥ १ ॥

ओं केशेषु यच्च पापकमीक्षिते रुदिते च यत्। तानि० ॥ २ ॥

अर्थ—और जो बालों मे बुराई होगी देखने के सम्बन्ध में और जो चलने फिरने में, बुराई होगी उस सबको० शेष पूर्ववत् ॥ २ ॥

ओं शीलेषु यच्च पापकं भाषिते हसिते च यत् । तानि० ॥ ३ ॥

अर्थ--और जो स्वभाव या व्यवहारों में और जो बोलने और हसने में बुराई होगी० शेष तुल्य० ॥ ३ ॥

ओं आरोकेषु च दन्तेषु हस्तयोः पादयोश्च यत् । तानि० ॥ ४ ॥

अर्थ--और दांतों के बीच में दांतों में और जो हाथ और पैरों में बुराई होगी० ॥ ४ ॥

होम से रक्त की शुद्धि

ओं ऊर्वोरुपस्थे जङ्घयोः सन्धानेषु च यानि ते । तानि ॥ ५ ॥

अर्थ--जाघों में गोपनीय इन्द्रिय में घुटनों में और अन्यान्य सन्धिस्थानों में बुराई होगी० ॥ ५ ॥

ओं यानि कानि च घोराणि सर्वांगेषु तवाभवन् पूर्णाऽऽहुतिभिराज्यस्य सर्साणि तान्यशीशमं स्वाहा ॥ ६ ॥ इदं कन्यायै, इदन्न मम ॥

अर्थ--हे कन्ये ! तेरे सब अङ्गों में जो कोई बुराई या कमी हो चुकी या होगी इस घृतकी पूर्णाहुतियों की प्रसिद्धि के साथ उन सब बुराई या कमियों को शान्त कर चुकने की प्रतिज्ञा कर चुका, ऐसा समझ ॥ ६ ॥

ये छः मन्त्र हैं, इन में से एक २ से छः आज्याहुति देनी फिर--

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये इदन्न मम ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे--इदन्न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय–इदन्नमम ॥

ओं भूर्भवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदं न मम ॥

अर्थ—प्रकाशक परमात्मा के लिये सुहुत हो।

इत्यादि चार व्याहृति मन्त्रों से चार आज्याहुति देके वधू वर वहां से उठके सभामण्डप के बाहर उत्तर दिशा में जावें तत्पश्चात् वर—

ध्रुव तथा अरुन्धती दर्शन

ध्रुवं पश्य।

अर्थ—ध्रुवको देख; ऐसा बोल के वधू को ध्रुव का तारा दिखलावे और वधू वर से बोले कि मैं—

पश्यामि ॥

अर्थ—ध्रुव के तारे को देखती हूं, तत्पश्चात् वधू—

ओं ध्रुवमसि ध्रुवाऽहं पतिकुले भूयासम् (अमुष्य असौ *)

अर्थ—हे ध्रुव नक्षत्र! तू जैसे निश्चल है वैसे ही मैं पति के कुल में ईश्वर करे कि निश्चल होऊं ॥

इस मन्त्र को बोल के तत्पश्चात्—

अरुन्धतीं पश्य ॥

अर्थ—अरुन्धती को देखो। ऐसा वाक्य बोल के वर वधू को तारा अरुंधतिका दिखलावे और वधू—

पश्यामि ॥ अर्थ—देखती हूं। ऐसा कह के—

---

* इस पद के स्थान मे षष्ठी विभक्त्यंत पती का नाम भी ले।

ओं अरुन्धत्यासि रुद्धाऽहमस्मि (अमुष्य, असौ)

अर्थ--अरुन्धति ! तारे ! जैसे तू सप्तर्षिनामक तारों के निकट संवद्धरुका रहता है, वैसे मैं भी अमुक नामवाली अमुक की पत्नी, अपने पति के नियम में रुक गई--बन्धगई।'

पारस्कर के मत में एक ध्रुव ही दिखाया जाता है। गोभिल ध्रुव और अरुन्धती दोनों को दिखलाना मानते हैं। मानवगृह्यसूत्रकार ध्रुव अरुन्धती और सप्तऋषियों का भी दिखलाना मानते हैं ॥

इस मन्त्र को वधू बोलके और वर, वधू की ओर देखके और वधू के मस्तक पर हाथ धरके--

ओं ध्रुवा द्योर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्।
ध्रुवासः पर्वता इमे ध्रुवा स्त्री पतिकुले इयम् ॥

अर्थ--हे वरान ने ! जैसे सूर्य की कान्ति वा विद्युत् सूर्य लोक वा पृथिव्यादि में निश्चल, जैसे भूमि अपने स्वरूप में स्थिर, जैसे यह सब संसार प्रवाह स्वरूप में स्थिर है, जैसे ये प्रत्यक्ष पहाड़ अपनी स्थिति में स्थिर हैं, वैसे यह तू मेरी स्त्री मेरे कुल में सदा स्थिर रह।

ओं ध्रुवमसि ध्रुवन्त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि मह्य त्वाऽदात्। बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती सं जीव शरदः शतम्।

अर्थ--हे वरानने पत्नी ! धारण और पालन करने योग्य मुझ पति के निकट स्थिर रह, मुझको अपनी इच्छा के अनुकूल तुझे परमात्मा ने दिया है तू मुझ पति के साथ बहुत उत्तम प्रजायुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त आनन्दपूर्वक जीवन धारण कर। वधू वर ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा करें कि जिससे कभी उलटे-विरोध में न चलें।

हे स्वामिन् ! जैसे आप मेरे सभी दृढ़ सङ्कल्प करके स्थिर हैं या जैसे मैं आप को स्थिर दृढ़ देखती हूं वैसे ही सदा के लिए मेरे साथ आप दृढ़ रहियेगा, क्योंकि मेरे मन के अनुकूल आप को परमामा समर्पित कर चुका है वैसे मुझ पत्नी के साथ उत्तम प्रजायुक्त होके सौ वर्ष पर्यन्त अच्छे जीविये,

इन दोनों मन्त्रों को बोले पश्चात् वधू और वर दोनों यज्ञकुण्ड के पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख होके कुण्ड के समीप बैठें और पूर्वोक्त--

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥ इससे एक

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥ इससे दूसरा

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

अर्थ--हे सुखप्रद जल ! तू प्राणियों का आश्रय भूत है, यह हमारा कथन शोभन हो।

विशेष भात का होम

इत्यादि तीन मन्त्रों से तीन २ आचमन दोनों करें पश्चात् समिधाओं से यज्ञकुण्ड में अग्नि को प्रदीप्त करके घृत और स्थालीपाक अर्थात् भात को उसी समय बनावें "ओम् अयन्तइध्म०" इत्यादि चार मन्त्रों से समिधा होम दोनों जने कर के पश्चात् आघरावाज्यभागाहुति ४ चार और व्याहृति आहुति चार दोनों मिल के ८ आज्याहुति, वर वधू देवें,

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इद मग्नये इदन्नमम ॥

ओं सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय इदन्न मम ॥

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा ॥ इमिन्द्राय---इदन्न मम ॥

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये इदन्न मम ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे---इदन्न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय—इदन्न मम ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदं न मम ॥

फिर जोऊपर सिद्ध किया हुवा ओदन अर्थात् भात है उसको एक पात्र में निकाल के उस के ऊपर स्रुवा से घृत सिंचन करके घृत और भात को अच्छे प्रकार मिलाकर दक्षिण हाथ से थोड़ा २ भात दोनों जने लेके—

ओं अग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदन्न मम ॥१॥

अर्थ—अग्नि के लिए सुहुत हो ।

ओं प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्नमम ॥२॥

अर्थ—प्रजाओं के पालक के लिये० ।

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थ—समस्त देवों के लिये सुहुत हो० ॥

ओम् अनुमतये, स्वाहा । इदमनुतये, इदन्न मम ॥४॥

अर्थ—अनुकूल मति वाले के लिये सुहुत हो ॥

इनमें से प्रत्येक मन्त्र से एक २ करके ४ चार स्थालीपाक अर्थात् भात की आहुति देनी फिर

इस मन्त्र से १ एक स्विष्टकृत् आहुति

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहकारम् । अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतंकरोतुमे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे, सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ॥ इदमग्नये स्विष्टकृते, इदन्नमम ॥

इस मन्त्र से १ स्विष्टकृत् आहुति देनी, फिर व्याहृति आहुति ४ और सामान्य प्रकरणोक्त अष्टाज्याहुति ८ आठ एवं १२ बारह आज्याहुति देनी, फिर शेष रहा हुआ भात एक पात्र में निकाल के उस पर घृत सेचन कर और दक्षिण हाथ में रखके-

ओं अन्नपाशेन मणिना प्राणसूत्रेण पृश्निना।
बध्नामि सत्यग्रन्थिना मनश्च हृदयं च ते ॥ १॥

अर्थ--हे वधू वा वर। अन्न है पाश-बन्धन जिसका ऐसे रत्न तुल्य शरीरान्तर्वर्ती डोरे से प्राणरूपी सूत से सचाई की गांठ लगा कर तेरे हृदय और मन को बांधती वा बांधता हूं।

ओं यदेतद्हृदयं तव तदस्तुहृदयं मम ॥
यदिदᳬ हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव ॥२॥

अर्थः--स्वामिन् वा हे पत्नी! जो यह तेरा आत्मा अन्तःकरण है, वह मेरा आत्मा अन्तःकरण के तुल्य प्रिय हो, और मेरा जो यह आत्मा प्राण और मन है, सो तेरे आत्मादि के लिए प्रिय सदा रहे ॥२।

ओं अन्नं प्राणस्य षड विशᳬस्तेन बध्नामि त्वा असौ

अर्थ--हे यशोदे वधू! जो प्राण का पोषण करने द्वारा छब्बीसवां तत्व अन्न है, उस से तुझको दृढ़ प्रीति से बांधता वा बांधती हूं ॥ ३ ॥ कहीं "षड्विंशः" ऐसा पाठ है षड्विंश का अर्थ भी बन्धन ही किया है।

वधू वर का सह भोजन

इन तीनों मन्त्रों को मन से जप के वर उस भात में से प्रथम थोड़ा सा भक्षण करके जो उच्छिष्ट भात रहे वह अपनी वधू के लिये खाने को देवे। और जब वधू उस को खा चुके तब वधू वर यज्ञमण्डप

में सम्बद्ध हुए शुभासन पर नियम से पूर्वाभिमुख बैठें, और सामवेदोक्त महावामदेव्यगान करें, तत्पश्चात् ईश्वर की स्तुति, आदि कर्म करके क्षार लवण रहित, मिष्ट दुग्ध घृतादि सहित भोजन करें, फिर पुरोहितादि सद्धर्मी और कार्यार्थ इकट्ठे हुए लोगों को सन्मानार्थ उत्तम भोजन कराना तत्पश्चात् यथा योग्य पुरुषों का पुरुष और स्त्रियों का भी आदर सत्कार करके बिदा कर देवें।

उत्तर विधि समाप्त

फिर दश घटिका रात्रि जाय तब वधू और वर पृथक् २ स्थान में भूमि में बिछौना करके तीन रात्रि पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत सहित रह कर शयन करें, और ऐसा भोजन करें कि स्वप्न में भी वीर्यपात न होवे, तत्पश्चात् चौथे दिवस विधि पूर्वक गर्भाधानसंस्कार करें यदि चौथे दिवस कोई अड़चन आवे तो अधिक दिन ब्रह्मचर्यव्रत में दृढ़ रहें, फिर जिस दिन दोनों की इच्छा हो और शास्त्रोक्त गर्भाधान की रात्री भी हो, उस रात्री में यथा विधि गर्भाधान करें। और—

दूसरे वा तीसरे दिन प्रातः काल वरपक्ष वाले लोग वधू और वर को रथ में बैठा के बड़े सन्मान से अपने घर में लावें, और जो वधू अपने माता पिता के घर को छोड़ते समय आंख में अश्रु भर लावे तो—

ओं जीवं रुदन्ति विमयन्ते अध्वरे दीर्घामनु प्रसितिं दीधियुर्नरः। वामं पितृभ्यो य इदं समेरिरे मयः पतिभ्यो जनयः परिष्वजे॥

अर्थ-हे विद्वान् लोगो जो मनुष्य पतिरूप स्त्रियों के जीवन सुधारने के उद्देश्य से कष्ट उठाते हैं और अपनी स्त्रियों को यज्ञ में प्रवेश कराते हैं और लम्बे गृहस्थाश्रम के श्रेष्ठ बन्धन को अनुकूल व्यवहार में लाते हैं और जो अपने माता पिताओं की सेवा के लिए

इस सुन्दर अपत्य को अच्छी तरह प्रेरित करते हैं, उन्हीं पतिरूप पुरुषों के लिए जायाएँ आलिङ्गन के लिए सुख को करती हैं।

इस मंत्र को वर बोले और रथ में बैठते समय वर अपने साथ दक्षिण की ओर वधू को बैठावे उस समय वर--

पूषा त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्रवहतां रथेन। गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि ॥ १ ॥

अर्थ---हे कन्ये! यहां से पकड़ने योग्य हैं हाथ जिस का ऐसा पोषण करने वाला, यह पति घर को पहुंचावेगा। और वेग वाले दो घोड़े वा घोड़े वाले रथ से बग्घी से तुझे अच्छे प्रकार ले जावे, तू अपने पति के घर को जा, जैसे कि तू घर की स्वामिनी हो, पति को शुभकृत्यों से वश में रखने वाली, तू पति के घर में स्थित भृत्यादि कों को अच्छे प्रकार आज्ञा दे॥

सुकिꣳशुकꣳशल्मलिं विश्वरूपꣳ हिरण्यवर्णꣳ सुवृतꣳ सुचक्रम्। आरोह सूर्ये अमृतस्य लोकꣳ स्योनं पत्ये वहतुꣳकृणुष्व ॥ २ ॥

अर्थ-हे सूर्यवत् तेजस्विनि! कन्ये! अच्छे पलाश के वृक्ष से निर्मित सेमर के वृक्ष की लकड़ियों से युक्त नाना वर्ण वाले सोने के अलंकारों से युक्त, अच्छे चलने वाले सुन्दर पहिये वाले, इस रथ पर तू चढ़, और अपने पति के लिए अपने गमन को सुखकारी और पीड़ा रहित स्थान कर।

इन दो मन्त्रों को बोल के रथ को चलावे, यदि वधू को वहां से अपने घर लाने के समय नौका पर बैठाना पड़े तो इस निम्न लिखित मन्त्र को पूर्व बोल के नौका पर बैठे—

अश्मन्वती रीयते संरभध्वमुत्तिष्ठत प्रतरता सखायः।
(ऋचा का पूर्वार्ध)

अर्थ—हे चेतनत्वेन सामानख्याति वाले जीवो ! जब पत्थर आदि से युक्त नदी बहती हो, तब अच्छे प्रकार वेग वा उत्साह से काम लो, सावधान होकर स्थित होओ, और उस नदी को अच्छी तरह उतर जाओ। और नाव से उतरते समय—

अत्रा जहाम ये असन्नशेवाः शिवान् वयमुत्तरे-मा भिवाजान्

अर्थ—ऐसा समझो कि यहां नदी पर ही दुःखदायी वा दुःख साधन हैं, उन्हें छोड़ते हैं। और हम कल्याणकारी अन्नादि पदार्थों को प्राप्त होने के लिए उतरेंगे ही।

इस उत्तरार्द्ध मन्त्र को बोल के नाव से उतरें, पुनः इसी प्रकार मार्ग में चार मार्गों का संयोग, नदी, व्याघ्र, चोर आदि से भय वा भयंकर स्थान, ऊंचे, नीचे खाड़ी वाली पृथिवी बड़े २ वृक्षों का झुण्ड वा श्मशान भूमि आवे तो—

मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ती दम्पती।
सुगेभिर्दुर्गमतीतामप द्रान्त्वरातयः॥

अर्थ—जो दुःख देने वाले डाकू आदि इन रथारूढ़ के प्रति सन्मुख आते हैं, वे ईश्वर करे कि न मिलें, दुर्गप्रदेश को उलंघन करके सुगम मार्गों से जाने वालों के शत्रु हैं वे भी ईश्वर करे कि भाग जावें॥

इस मन्त्र को बोले, तत्पश्चात् वधू वर जिस रथ में बैठके जाते हों उस रथ का कोई अङ्ग टूट जाय अथवा किसी प्रकार का अक-

स्मात् उपद्रव होवे तो मार्ग में कोई अच्छा स्थान देख के निवास करना और साथ रक्खे हुए विवाहाग्नि को प्रकट करके उसमें ४ व्याहृति आज्याहुति देनी, पश्चात् वामदेव्यगान करना फिर जब वधू वर का रथ वर के घर के आगे पहुंचे तब कुलीन पुत्रवती, सौभाग्यवती वा कोई ब्राह्मणी वा अपने कुल की स्त्री आगे सामने आकर वधू का हाथ पकड़ के वर के साथ रथ से नीचे उतारे, और वर के साथ सभा मण्डप में ले जावे, सभामण्डप द्वारे आते ही वर वहां कार्यार्थ आये हुए लोगों की ओर अवलोकन करके—

सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत ।
सौभाग्यमस्यै दत्वा याथास्तं विपरेतन ॥१॥

अर्थ—हे विद्वानो ! यह वधू मङ्गलस्वरूप है, अतः इस कन्या के साथ मेल रक्खो और इसको मङ्गल दृष्टि से देखो और इसके लिए सौभाग्य का आशीर्वाद देकर अपने २ घर के प्रति जाओ और विशेष रूप से पराङ्मुख होकर न जाओ, किन्तु पुत्रादि के मङ्गल की आशा से फिर भी आने के लिए जाओ ॥

इन मन्त्र को बोले और आप लोग—

ओं सौभाग्यमस्तु, ओं शुभं भवतु

अर्थ—ईश्वर करे कि सौभाग्य हो और कल्याण हो ।

इस प्रकार आशीर्वाद देवें तत्पश्चात् वर—

इह प्रियं प्रजया ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि । एना पत्या तन्वं १ संसृजस्वाधाजिव्री विदथमावदाथः

अर्थ--हे वधू ! तेरा इस पति कुल में सुख संतान के साथ अच्छे प्रकार बढ़े, घर की स्वामिनी बनने के लिये इस पति के घर जागती रहे सावधान रहे । इस पति के साथ ही अपने शरीर का संसर्ग कर, और वृद्धावस्था को प्राप्त हुए दोनों पति पत्नी गृहस्थआश्रम धर्म पालन रूप यज्ञ की अच्छे प्रकार प्रशंसा करो ॥

इस मन्त्र को बोल के वधू को ले जावे सभामण्डप में फिर वधू वर पूर्व स्थापित यज्ञकुण्ड के समीप जावें उस समय वर--

ओं इह गावः प्रजायध्वमिहाश्वा इह पूरुषाः । इहो सहस्रदक्षिणोपि पूषा निषीदतु ॥

अर्थ--इस पति कुल में गौएं अधिक हों घोड़े और पुत्र पौत्रादि अधिक हों । और यहां इस घर का पोषण करने वाला (मैं) सहस्रों का दान देता हुवा ही बैठा--रहूं ।

इस मन्त्र को बोल के यज्ञकुण्ड के पश्चिम भाग में पीठासन अथवा तृणासन पर वधू को अपने दक्षिण भाग में पूर्वाभिमुख बैठावे, फिर--

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।

अर्थ--हे सुखप्रद जल !! तू प्राणियों का आश्रय भूत है यह हमारा कथन शोभन हो ।

इत्यादि तीन मन्त्रों से तीन अचमन करें, फिर कुण्ड में यथा विधि समिधाचयन अग्न्याधान करें जब उसी कुण्ड में अग्निप्रज्वलित हो तब उस पर घृत सिद्ध कर के समिदाधान कर प्रदीप्त हुए अग्नि में आघारावाज्याहुति चार ४ और व्याहृति आहुति चार ४ अष्टाज्याहुति आठ ८ सब मिल के सोलह आज्याहुतियों को (वधू वर कर के)

प्रधान होम का आरम्भ निम्नलिखित मन्त्रों से करें--

ओं इह धृतिः स्वाहा। इदमिह धृत्यै। इदन्न मम ॥

अर्थ—हे वधू ! इस घर में तेरा धैर्य बना रहे।

ओं इह स्वधृतिः स्वाहा। इदमिह स्वधृत्यै। इदन्नमम

अर्थ—इस घर में अपने कुटुम्बी लोगों के साथ एकत्र स्थिति मेल हो।

ओं इह रतिः स्वाहा। इदमिह रत्यै इदन्न मम ॥

अर्थ—यहां रमण बना रहे।

ओं इह रमस्व स्वाहा। इदमिह रमाय। इदन्न मम ॥

अर्थ—यहां तू भी रमण किया करे।

ओं मयि धृतिः स्वाहा। इदं मयि धृत्यै, इदन्न मम ॥

अर्थ—मुझ पति में विशेष कर धैर्य बना रहे।

ओं मयि स्वधृतिः स्वाहा। इदं मयि स्वधृत्यै इदन्न मम॥

अर्थ—विशेष आत्मीय जनों के साथ मेरे लिये मेल रहे।

ओं मयि रमः स्वहा। इदं मयि रमाय। इदन्न मम॥

अर्थ—मेरे पदार्थों में रमण किया कर।

ओं मयि रमस्व स्वाहा, इदं मयिरमाय, इदन्न मम॥

अर्थ—विशेष कर मुझ में ही रमण किया कर।

इन प्रत्येक मन्त्रों से एक २ कर के आठ आज्याहुति देकर—

ओं आ नः प्रजां जनयतु प्रजापतिराजरसाय समनक्त्वर्यमा। अदुर्मंगलीः पतिलोकमाविश शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा, इदं सूर्यायै सावित्र्यै, इदन्न मम ॥

अर्थ—हे वधू न्यायकारी दयालु परमात्मा कृपा कर के जरावस्था पर्यन्त जीने के लिये, हमारी उत्तम प्रजा को शुभ गुण कर्म और स्वभाव से प्रसिद्ध करे, उस से उत्तम सुख को प्राप्त करे, और वे शुभ गुण युक्त स्त्री लोग सब कुटुम्बियों को आनन्द देवें, उन में से एक तू हे वरानने पति के घर वा सुख को प्रवेश कर, वा प्राप्त हो, हमारे पिता आदि मनुष्यों के लिये सुखकारिणी गौ आदि को सुखकर्त्री हो।

ओं अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः। वीरसूर्देवृकामा स्योना शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा। इदं सूर्यायै सावित्र्यै इदन्न मम ॥ २ ॥

अर्थ—पति से विरोध न करने वाली अपने उत्तम पुरुषार्थ से प्रिय दृष्टि हो, मंगल करने वाली सब पशुओं को सुखदाता पवित्रान्तःकरण युक्त सुन्दर शुभ गुण कर्म स्वभाव से उत्तम वीर पुरुषों को उत्पन्न करने वाली देवर की कामना करती हुई सुखयुक्त हो के हमारे मनुष्यादि के लिये सदा सुख करने हारी हो, और पशु आदि को भी सुख देने वाली हो, वैसे ही मैं तेरा पति भी बर्त्ता करूं।

ओं इमां त्वमिन्द्रमीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु। दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि स्वाहा ॥ इदं सूर्यायै, सावित्र्यै इदन्न मम ॥ ३ ॥

अर्थः—ईश्वर, पुरुष और स्त्री को आज्ञा देता है कि हे वीर्य सेचन करने हारे परमैश्वर्ययुक्त! इस वधू के स्वामिन्, तू इस वधू को उत्तमपुत्रयुक्त सुन्दर, सौभाग्य वाली कर, इस वधू में दश पुत्रों को

उत्पन्न कर अधिक नहीं, और हे स्त्री तू भी अधिक कामना मत कर, किन्तु दश पुत्र और ग्यारहवें पति को प्राप्त होकर सन्तोष कर, यदि इससे आगे सन्तानोत्पत्ति का लोभ करोगे तो तुम्हारे दुष्ट अल्पायु निर्बुद्धि सन्तान होंगे, और तुम भी अल्पायु रोगग्रस्त हो जावोगे, इस लिए अधिक सन्तानोत्पत्ति न करना।

ओं सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु स्वाहा॥
इदं सूर्यायै सावित्र्यै, इदन्न मम॥ ४॥

अर्थः—हे वरानने! मेरा पिता जो कि तेरा श्वशुर है उसमें उचित प्रीति करके सम्यक् प्रकाशमान चक्रवर्ती राजा की राणी के समान पक्षपात छोड़ के प्रवृत्त हो, मेरी माता जो कि तेरी सासु है उस में प्रेमयुक्त हो के उसी की आज्ञा में सम्यक् प्रकाशमान रहा कर, जो मेरी बहिन और तेरी ननन्द है उसमें भी प्रीतियुक्त हो और मेरे भाई जो तेरे देवर—ज्येष्ठ अथवा कनिष्ठ हैं, उनमें भी प्रीति से प्रकाशमान अधिकार युक्त हो, अर्थात् सबसे अविरोध पूर्वक प्रीति से बर्ताव कर॥

इन ४ चार मन्त्रों से ४ आज्याहुति दे के स्विष्टकृत होमाहुति १ एक—

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतंकरोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे, सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते, इदन्न मम॥

व्याहृतियों की आज्याहुति ४ चार

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नयेऽइदन्न मम ॥

ओं भुववायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदन्न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय-इदन्नमम ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥

इदमाग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदन्न मम ॥

और प्राजापत्याहुति १ एक

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये इदन्नमम ॥

ये सब मिल के छः ज्याहुति दे कर—

समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ ।

संमातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ ॥

अर्थः—हे विद्वानों ! आप हम को निश्चय करके जानों कि अपनी प्रसन्नता पूर्वक गृहस्थाश्रम में एकत्र रहने के लिए हम एक दूसरे को स्वीकार करते हैं कि हमारे दोनों के हृदय जल समान शान्त और मिले हुए रहेंगे, जैसे प्राण वायु हम को प्रिय है वैसे हम दोनों सदा एक दूसरे से रहेंगे, जैसे परमात्मा सब से मिला हुआ सबको धारण करता है वैसे हम दोनों एक दूसरे को धारण करेंगे, जैसे उपदेश करने हारे उपदेशक श्रोताओं से प्रीति करते हैं वैसे हमारे दोनों के आत्मा एक दूसरे के साथ दृढ़ प्रेम को धारण करे ॥

इस मंत्र को बोल के दोनों दधि प्राशन करें तत्पश्चात्—

अहं भो अभिवादयामि * ॥

* अभिवादन के लिये वेदोक्त वाक्य नमस्ते ही उत्तम है ।

अर्थ—मैं अमुक आपको प्रणाम करता हूं वा करती हूं ॥

इस वाक्य को बोल के दोनों वधू वर, वर की माता पिता आदि वृद्धों को प्रीति पूर्वक नमस्कार करें पश्चात् सुभूषित होकर शुभासन पर बैठ के वामदेव्यगान कर के उसी समय ईश्वरोपासना करनी–उस समय कार्यार्थ आए हुए सब स्त्री पुरुष ध्यानावस्थित होकर परमेश्वर का ध्यान करें, तथा वधू वर, पिता आचार्य और पुरोहित आदि को कहें कि—

ओं स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥

अर्थ आप लोग इसके लिए स्वस्तिवाद कहिए।

तत्पश्चात् पिता आचार्य पुरोहित जो विद्वान् हों अथवा उनके अभाव में यदि वधू वर विद्वान् वेदवित् हों तो वे ही दोनों स्वस्तिवाचन का पाठ बड़े प्रेम से करें। पाठ हुए पश्चात् कार्यार्थ आए हुए स्त्री पुरुष सब—

ओं स्वस्ति ओं स्वस्ति ओं स्वस्ति ॥

अर्थ—संसार का रक्षक भगवान् इनका अत्यन्त कल्याण करे।

इस वाक्य को बोलें तत्पश्चात् कार्य कर्त्ता पिता, चाचा, भाई आदि पुरुषों को तथा माता, चाची भगिनी आदि, स्त्रियों को यथावत् सत्कार करके विदा करें। तत्पश्चात् वधू वर क्षीर आहार और विषयतृष्णारहित व्रतस्थ होकर शास्त्रोक्त रीति से विवाह के चौथे दिवस में गर्भाधान संस्कार करें अथवा उस दिन, ऋतुकाल न हो तो किसी दूसरे दिन गर्भ स्थापन करें, और जो वर दूसरे देश से विवाह के लिए आया हो तो वह जहां जिस स्थान में विवाह करने के लिए जाकर उतरा हो उस स्थान में गर्भाधान करे, पुनः अपने घर आने पर पति, सासु, श्वसुर, ननन्द, देवर, देवराणी, ज्येष्ठ जिठानी आदि कुटुम्ब के मनुष्य वधू की पूजा अर्थात् सत्कार करें सदा प्रीतिपूर्वक

परस्पर बर्ते और मधुरवाणी वस्त्र आभूषण आदि से सदा प्रसन्न और सन्तुष्ट वधू को रक्खें। तथा वधू सब को प्रसन्न रक्खे। और वर उस वधू के साथ पत्नी व्रतादि सद्धर्म चाल चलन से सदा पति की आज्ञा में तत्पर और उत्सुक रहे तथा वर भी स्त्री की सेवा प्रसन्नता में तत्पर रहे। ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ३

इति विवाहसंस्कारविधिः।

विवाह संस्कार संबंधि सामग्री

१ समिधा २ घृत ३ शरकरा ४ शहद ५ दही ६ शमीपत्र ७धान की खील ८ शूप (छज्ज) ९ दंड (लाठी) १० घड़ा ११पाषाण शिला १२ आमके पत्ते १३ आटा १४ रंग पांच १५ गिलास (चार) १६ लोटा (एक) १७ थाली (दो)१८ चमचे (चार) १९ धोती जोड़ा २० दुपट्टा २१ अंगोछे (दो) २२ कटोरे कांसी के ६ २३ बाटी (१) २४ दीयासलाई २५ आसन (८) २६ कपूर २७ रुई २८ चन्दनकी समिधा २९ भात ३० धूपबत्ती ३१ हवन सामग्री (ऋतुअनुसार) ३२दान तथा दक्षिणा के लिये द्रव्य ३३ वेदी की सजावट का समान

चन्द्रभानु शर्म्मा उपदेशक
आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब